चरनदासजी की बानी

॥ पहिला भाग ॥

जिसमें

पहिले इन महात्मा का संक्षेप में जीवन-चरित्र और उनके
अनुभव की महिमा और सब संतों व साधु महात्माओं
के मार्ग के मूल तत्व की एकता दिखाई है

और

बानी में उक्त महात्मा के ग्रंथ से अति मनोहर और हृदय
बेधक भजन, चौपाई दोहे आदिक, कई प्राचीन हस्त-
लिखित पुस्तकों से चुनकर मुख्य २ अंगों और
रागों के अनुसार यथा क्रम रक्खे गये हैं

और

गूढ़ कड़ियों व कड़े या अनूठे शब्दों के अर्थ व
संकेत भी नीचे लिख दिये गये हैं

प्रकाशक तथा मुद्रक

बेलविडियर प्रिंटिंग वर्क्स, प्रयाग।

१९५२ मूल्य १।)

॥ भेट ॥

—:०:—

चरनदास जी की बानी उन के जीवन चरित्र के साथ आप साहिबों की भेट करने में हम यहां कुछ और लिखने की ज़रूरत नहीं समझते सिवाय इस के कि बाबू सरजू प्रसाद मुआफ़ीदार तेरही मुआफ़ी (ज़िला बांदा) को धन्यवाद दें जिन्हों ने इस पुस्तक की तैयारी और नये ढंग की तर्तीब में पूरी तरह से मदद दी है। जो कि उन के बुज़र्ग लोग चरनदास जी के ही मत के हैं इस से उन के पास बहुत पुराना शुद्ध ग्रंथ इन महात्मा का और दूसरा मसाला इनका जीवन चरित्र लिखने के लिये मौजूद था।

संपादक

स्वर्गवासी रायबहादुर बालेश्वर प्रसाद साहब

चरनदास जी का संक्षेप जीवन चरित्र और उन की गति की महिमा और सब संतों और साधों के मूल तत्व (उसूल) की एकता का वर्णन।

—:o:—

गुरु चरनदास जी का जन्म राजपूताना के मेवात देश के डेहरा नामी गांव में एक प्रसिद्ध दूसर कुल में हुआ था, जन्म का दिन भादों सुदी ३ मंगलवार सम्वत १७६० विक्रमी मुताबिक सन् १७०३ ईसवी के था और ७९ बरस की उमर तक प्रेमाभक्ति का सदावर्त चलाकर सम्वत १८३९ में दिल्ली में चोला छोड़ा जहाँ उनका स्थान अब तक बना हुआ है। यह ७६ बरस का समय बड़े तखड़ पखड़ और उखाड़ पछाड़ का था जो कि साध या संत के विराजमान होने का एक लक्षण है। सन १७०७ अर्थात इनके प्रगट होने के चार बरस पीछे तक औरङ्गजेब दिल्ली के तख्त पर था और इस जालिम बादशाह की दारुण पीड़ा और मरहट्टों के साथ घोर संग्राम का हाल इतिहास से जाना जा सकता है। उसके मरने पर बहादुरशाह का तख्त पर बैठना और पाँच बरस तक उसकी सिक्खों के साथ लगातार लड़ाइयाँ भी प्रसिद्ध है। फिर सन १७१२ और १७१९ के बीच में तीन बादशाह हुए और सन १७१६ में मुगल खानदान फिर गद्दी पर आया और मुहम्मद शाह का निपुंसक राज शुरू हुआ जो मरता जीता सन १७४८ तक सिसकता रहा। इसी बादशाहत में सन् १७३८ में नादिरशाह का हमला हुआ जिसने लूट मार कर लोहू की नदी बहा दी और कितने देशों को भिखमगा बना दिया और स्त्रियों की हुर्मत ली। १७४८ से ५४ तक अहमदशाह का राज रहा और उसके पीछे आलमगीर सानी पांच बरस तक गद्दी पर था और सन १७५६ में शाहआलम बादशाह हुआ जो चरनदास जी के गुप्त होने के समय तक नाम मात्र को राज करता रहा। इसके जमाने में अबदालियों की चढ़ाई और पानीपत की लड़ाई हुई। अंगरेजों अर्थात् ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकार की दृढ़ता इसी के समय में हुई और सन् १७७४ से १७८५ तक प्रतापी लाट वारन हेस्टिंग्ज हिन्दुस्तान का गवर्नर जनरल रहा।

यह सब तवारीखी हाल हैं और इनके लिखने का इतना ही अभिप्राय है कि चरनदास जी के समय में हिंदुस्तानियों की पूरी [illegible] हुई और उनका बल तोड़ कर परमार्थ में लगने की थोड़ा बहुत योग्यता पैदा की गई।

चरनदास जी का घरू नाम रनजीतसिंह, उनके पिता का नाम मुरलीधर और माता का कुंजो था। जब यह सात बरस के थे एक दिन इनके पिता जंगल में गये (जैसा कि वह कभा २ सुमिरन ध्यान के लिये जाया करते थे) और फिर वहाँ से न लौटे। घर वालों ने बहुत खोज की पर सिवाय उनके कपड़ों के जो जंगल में एक जगह रक्खे मिले और कुछ पता न चला। तब चरनदासजी को उनकी मां के साथ उनके नाना जो दिल्ली में रहते थे अपने घर ले आये।

चरनदास जी को बालपन ही से परमार्थ का चाव था। लिखा है कि १९ बरस की अवस्था में इन को जंगल में जहां यह भगवंत के विरह में व्याकुल होकर रो रहे थे शुकदेव मुनि [illegible]र शब्द मार्ग का उपदेश दिया। चरनदास जी बारह बरस तक दिल्ली में अभ्यास करत[illegible] [illegible] उसके पीछे लोगों को उपदेश देना आरंभ किया।

उनके निकटवर्ती शिष्य ५२ थे जिनकी बावन गद्दियाँ अलग-अलग आज कल वर्तमान हैं, परंतु इनके गुरुमुख चेले गुसाईं युक्तानन्द जी समझे जाते थे उनकी चेलियों में सहजो बाई और दया बाई की भक्ति बड़ी प्रचंड थी जो कि उनकी कोमल और अपूर्व बानी से टपकती है।

चरनदास जी के विषय में बहुत से करामात के कौतुक कहे जाते हैं जो उनके शिष्य रामरूप जी की बनाई हुई "गुरु भक्ति प्रकाश" नामक पोथी में लिखे हैं परन्तु उनमें से कोई ऐसे नहीं हैं जिनसे उनकी महिमा ऐसों के चित्त में बढ़े जो साध गति की समर्थता को जानते हैं इसलिये उनको विस्तार के साथ लिखना आवश्यक नहीं तौ भी नमूने की तरह दो तीन लिख दिये जाते हैं। कहा जाता है कि (१) चरनदास जी ने अपनी माँ को साक्षात् भगवान् के दर्शन कराये। (२) नादिरशाह ने विरोध से इनको कैद में रक्खा जहाँ से वह गुप्त हो गये। फिर उसने दूसरी बार पकड़वा कर अपने सामने बेड़ी हथकड़ी और तौक डलवाकर कारागार में बंद करके कुंजी दरवाजे के ताले की अपने पास रख ली, रात को चरनदास जी नादिर शाह के सोने के कमरे में प्रगट होकर उसके सिर पर लात मारी कि बादशाह काँपने लगा और चरनों पर गिर कर क्षमा माँगी। (३) शाह आलमगीर सानी के मरने की तिथि और घड़ी उन्होंने दो बरस पहले से बता दी थी—इत्यादि।

पर ऐसी करामातें महात्मा चरनदासजी सरीखे भारी गति के पुरुष के लिये महा तुच्छ बात है क्योंकि पूरे साध की अपने भगवत से एकता हो जाती है अर्थात् दोनों में कोई भेद नहीं रहता।

सब सच्चे साधों और संतों ने गुरू और नाम की महिमा गाई है और कहा है कि बिना इन दोनों की मुख्यता किये किसी साधन से जीव का पूरा उद्धार नहीं हो सकता। उन सब का मार्ग एक है अर्थात् शब्द अभ्यास, क्योंकि "गुरू" से उनका अभिप्राय शब्द अभ्यासी और शब्द सरूपी गुरू से है चाहे वह किसी पंथ और जात में हों और "नाम" का मतलब धुन्यात्मक नाम है जिसकी धुनि आप से आप घट घट के ऊँचे देश में हो रही है। चरनदास जी पूरे साध गुरू थे जैसा कि इस पुस्तक के सारांश निरूपन अंग के शब्दों को समझ कर पढ़ने से विदित होता है। यहाँ कहा है कि सतगुरु वही है जो **शब्द** की चोट करता है और **नाम** वह है जो लिखने पढ़ने और बोलने में नहीं आता है अर्थात् धुन्यात्मक नाम, परंतु इस भेद को उनके अनुयाइयों में से भी विरले समझते हैं। यही हाल कबीर साहब, गुरु नानक, पलटू साहब, जगजीवन साहब, दरिया साहब और दूसरे महात्माओं के मतों का है। पर याद रखना चाहिये कि उनके चलाने वाले महापुरुष और महात्मा थे और जो एक मत के अनुयाई दूसरे मत के आदि आचार्य या उस मत की निंदा करते हैं वह अनसमझता से मानों अपने आचार्य और अपने मत की निंदा करते हैं और अपने को महा पातकी बनाते हैं।

यह सलाह उन लोगों के हित के लिये है जो साधों या संतों के पंथ में हैं निरे पंडितों और विद्वानों के लिये नहीं है जिनकी आँखों पर ऊँची जाति और विद्या बुद्धि के अहंकार का परदा पड़ा हुआ है। वह बेचारे क्या करें क्योंकि सब साधों और संतों ने जाति पाँति करम भरम, मूरत पूजा और शास्त्रों की बहिरमुखी करतूत का निषेध ज़ोर देकर किया है जिससे न केवल इनके जाति अभिमान पर चोट लगती है वरन जीविका में भी खलल पड़ता है इसलिये यह विरोध के घाट पर आ बैठते हैं।

चरनदास जी ने भी और साध संतों की तरह बाहरी कार्रवाई और अटक भटक का खंडन किया है और यद्यपि बानी में जोग बैराग ज्ञान आदिक सब साधन कहे हैं परन्तु [illegible]

*सहजो बाई दया बाई की बानी हम छाप चुके हैं।

में नाम और गुरु भक्ति ही को सबसे ऊँचा रक्खा है और इसका इशारा अपनी बानी के समाप्त की चौपाई में किया है—

> अद्भुत ग्रंथ महा सुख दाई । ताकी महिमा कही न जाई ।।
> ता में जोग ज्ञान बैरागा । प्रेम भक्ति जा में अनुरागा ॥
> निर्गुन सर्गुन सब हीं कहिया । फिर गुरु चरन कमल में रहिया ॥
> जो कोइ पढ़ि पढ़ि अर्थ विचारे । आप तरे औरन को तारे ।।

नीचे लिखी हुई कड़ियों में चरनदास जी ने वेद, पुरान, देवताओं की पूजा, तीरथ, बरत, करम भरम, इत्यादि की असल हैसियत दिखला कर गुरु भक्ति और नाम को दृढ़ाया है—

शब्दों की कड़िया

कड़ियाँ	शब्द
छर ही नाद वेद अरु पढ़ित छर ज्ञानी अज्ञानी । ब्रह्मा सेस महेसर छर ही छर ही त्रैगुन माया । छर ही सहित लिये औतारा छर ह्वाँ तक जहँ माया । चरनदास सुकदेव बतावे निःअच्छर है सब सूँन्यारा ।	भेद बानी अंग का शब्द ९
सब जग पाँच तत्व का उपासी । परम तत्व पांचों से आगे गुरु सुकदेव बखानें ।	भेद बानी अंग का शब्द ३
बिरंच महादेव से मीन बहुते जहां होयं परगट कभी गोत मारा । तासु में बुदबुदे अंड उपजैं मिटैं गुरु दई दृष्टि जा सू निहारा ।	भेद बानी अंग का शब्द १३
किरिया कर्म भर्म उरझेरे ये माया के भटके । ज्ञान ध्यान दोउ पहुँचत नाहीं राम रहीमा फटके । जग कुल रीत लोक मरजादा मानत नाहीं हटके ।	अनहद शब्द की महिमा के अंग का शब्द १२
साधो घूँघट भर्म उठाय होली खेलिये । वेद पुरान लाज तजिये री इन मैं ना उरझैये ।	करम भरम के निषेध अंग का शब्द २
गुरु दूती बिन सखी पीव न देखो जाय । भावैं तुम जप तप करि देखो भावैं तीरथ न्हाय । वेद पुरान सबै जो ढूँढ़े स्नुति इस्मृति सब धाय । आनि धर्म औ किया कर्म में दीन्हों मोहिं भरमाय ।	भेद बानी अंग का शब्द १

मैनेजर
संतबानी पुस्तकमाला
बेलवीडियर प्रेस,
इलाहाबाद ।

अंगों का सूचीपत्र

सूची शब्दों की

चरनदास जी की बानी

सतगुरु महिमा

गुरु महिमा

॥ दोहा ॥

गुरु समान तिहुँ लोक में और न दीखै कोय ।
नाम लिये पातक नसै ध्यान किये हरि होय ॥१॥
गुरु ही के परताप सूं मिटै जगत की व्याध ।
राग दोष दुख ना रहै उपजै प्रेम अगाध ॥२॥
गुरु के चरनन में धरो चित बुध मन हँकार ।
जब कुछ आपा ना रहै उतरै सबही भार ॥३॥
तुम दाता हम मंगता श्री सुकदेव दयाल ।
भक्ति दई व्याधा गई मेटे जग जंजाल ॥४॥
किसू काम के थे नहीं कोई न कौड़ी देह ।
गुरु सुकदेव कृपा करी भई अमोलक देह ॥५॥
को है कोइ न जानता गिनती में नहिं नांव ।
गुरु सुकदेव कृपा करी पुजने लागे पांव ॥६॥
सीधी पलक न देखते छूते नाहीं छांहिं ।
गुरु सुकदेव कृपा करी चरनोदक ले जाहिं ॥७॥
दूसर के बालक हुते भक्ति बिना कंगाल ।
गुरु सुकदेव कृपा करी हरिधन किये निहाल ॥८॥
जा धन कूं ठग न लगै धारी[1] सकै न लूट ।
चोर चुराय सकै नहीं गांठ गिरै नहिं छूट ॥९॥
बलिहारी गुरु आपने तन मन सदके[2] जांव ।
जीव ब्रह्म छिन में कियो पाई भूली ठांव ॥१०॥

---

(१) धरकार की जात जो प्राय: लुटेरू होते हैं। (२) न्योछावर।

जब सूं गुरु किरपा करी दरसन दीन्हे मोहिं ।
रोम रोम में वै रमे चरनदास नहिं कोय ॥११॥
जाति बरन कुल मन गया गया देह अभिमान ।
अपने मुख सूं क्या कहूँ जगही करै बखान ॥१२॥

॥ सतगुरु शब्द ॥

सतगुरु मेरा सूरमा करै शब्द की चोट ।
मारै गोला प्रेम का ढहै भरम का कोट ॥१३॥
मुख सेती बोलन थका सुनै थका जो कान ।
पावन सूं फिरवा थका सतगुरु मारा बान ॥१४॥
मैं मिरगा[१] गुरु पारधी[२] शब्द लगायो बान ।
चरनदास घायल गिरे तन मन बीधे प्रान ॥१५॥
शब्द बान मोहिं मारिया लगी कलेजे माहिं ।
मारि हँसे सुकदेव जी बाकी छोड़ी नाहिं ॥१६॥
सतगुरु शब्दी तेग[३] है लागत दो करि देहि ।
पीठ फेरि कायर भजै सूरा सनमुख लेहि ॥१७॥
सतगुरु शब्दी सेल[४] है सहै धमूका साध ।
कायर ऊपर जो चलै तौ जावै बरबाद ॥१८॥
सतगुरु शब्दी तीर है तन मन कीयो छेद ।
बेदरदी समझै नहीं बिरही पावै भेद ॥१९॥
सतगुरु शब्दी लागिया नावक[५] का सा तीर ।
कसकत है निकसत नहीं होत प्रेम की पीर ॥२०॥
सतगुरु शब्दी बान है अँग अँग डारे तोड़ ।
प्रेम खेत घायल गिरे टांका लगै न जोड़ ॥२१॥
सतगुरु शब्दी मारिया पूरा आया वार[६] ।
प्रेमी जूझै खेत में लगा न राखा तार ॥२२॥

(१) हिरन । (२) शिकारी (३) तलवार । (४) भाला । (५) गासी । (६) घाव ।

ऐसी मारी खैंच कर लगी वार गइ पार।
जिनका आपा ना रहा भये रूप ततसार[1] ॥२३॥
सतगुरु के मारे मुए बहुरि न उपजै आय।
चौरासी बंधन छुटैं हरिपद पहुंचै जाय ॥२४॥

॥ सतगुरु बचन ॥

सतगुरु के बचनों मुए धन्य जिन्हों के भाग।
त्रैगुन[2] ते ऊपर गये जहां दोष नहिं राग ॥२५॥
बचन लगा गुरुदेव का छुटे राज के ताज[3]।
हीरा मोती नारि सुत गज घोड़ा अरु बाज[4] ॥२६॥
बचन लगा गुरु ज्ञान का रूखे लागे भोग।
इन्द्रकि पदवी लों[5] उन्हैं चरनदास सब रोग ॥२७॥

॥ उपदेश गुरु भक्ति का ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु के आगे राखै माथा। कहै पाप दुख मेटो नाथा॥
मैं आधीन तुम्हारो दासा। देहु आपने चरनन बासा॥
यह तन मन लै भेंट चढ़ायो। अपनी इच्छा कुछ न रहायो॥
जो चाहे सो तुमहीं करो। या भांडे में जो कुछ भरो॥
भावै धूप छांह में डारो। भावैं बोरो भावै तारो॥
गुन पौरुष कुछ बुधि नहिं मेरी। सब बिधि सरन गही प्रभु तेरी॥
मैं चकई अरु तुम कियो डोरा। मैं जो फिरूँ सब तुम्हरे जोरा॥
मैं अब बैठा नाव तुम्हारी। आसा नदी से करिये पारी॥२८॥

॥ दोहा ॥

गुरु के आगे जाय करि ऐसे बोलै बोल।
कछू कपट राखै नहीं अरज करै मन खोल ॥२९॥
यह आपा तुम कूं दिया जित चाहौ तित राखि।
चरनदास द्वारे परो भावै झिड़को लाखि ॥३०॥

---

(१) उसी की तरह। (२) तीन गुणों का मंडल। (३) मुकुट। (४) कर, महसूल। (५) तक।

॥ चौपाई ॥

रिद्धि सिद्धि फल कछू न चाहूं । जगत कामना को नहिं लाऊं ॥
और कामना मैं नहिं राखूं । रसना नाम तुम्हारो भाखूं ॥
चौरासी में बहु दुख पायो । ता ते सरन तिहारी आयो ॥
मुक्ति होन की मन में आवै । आवागवन सूं जीव डरावै ॥
प्रेम प्रीति में हिरदा भीजै । यही दान दाता मोहिं दीजै ॥
अपना कीजै गहिये बाहीं । धरिये सिर पर हाथ गुसाईं ॥
चरनदास को लेहु उबारे । मैं अंडा तुम सेवनहारे ॥३१॥

॥ दोहा ॥

अंडा जब आगे गिरै तब गुरु लेवैं सेइ ।
करैं बराबर आपनी सिख को निस्सन्देह ॥३२॥
अपना करि सेवन करैं तीन भांति गुर देव ।
पंजा[1] पच्छी कुंज मन कछुवा दृष्टि जु भेव ॥३३॥
जो वै बिछुरैं घड़ी सी तौ गंदा होइ जाय ।
चरनदास यों कहत हैं गुरु को राखि रिझाय ॥३४॥
पितु सूं माता सौगुना सुत को राखै प्यार ।
मन सेती सेवन करै तन सूं डांट अरु गार[2] ॥३५॥
माता सूं हरि सौ गुना जिन से सौ गुरुदेव ।
प्यार करैं औगुन हरैं चरनदास सुकदेव ॥३६॥
कांचे भांडे[3] सूं रहै ज्यों कुम्हार को नेह ।
भीतर सूं रच्छा करै बाहर चोटै देह ॥३७॥
दृष्टि पड़ै गुरुदेव की देखत करैं निहाल ।
औरैं मति पलटैं तबै कागा होत मराल[4] ॥३८॥
दया होय गुरुदेव की भजै[5] मान अरु मैन[6] ।
भोग वासना सब छुटै पावै अति ही चैन ॥३९॥
जब सतगुरु किरपा करैं खोलि दिखावैं नैन ।
जग झूठा दीखन लगै देह परे की सैन[7] ॥४०॥

---

(१) साधारन चिड़िया अपने अंडे को पंजा रख कर सेती है, कुंज चिड़िया मन यानी ध्यान से, और कछुवा दृष्टि से। (२) गाली। (३) बरतन। (४) हंस। (५) भागे। (६) काम। (७) दूर का इशारा जो भ्रम सा मालूम होता है।

॥ अष्टपदी ॥

गुरु बिन और न जान मान मेरो कहो ।
चरनदास उपदेस बिचारत ही रहो ॥
बेद रूप गुरु होहिं कि कथा सुनावहीं ।
पंडित को धरि रूप कि अर्थ बतावहीं ॥
कल्पबृच्छ गुरुदेव मनोरथ सब सरें ।
कामधेन गुरुदेव छुधा तृस्ना हरें ॥
गुरु ही सेस महेस तोहि चेतन करें ।
गुरु ब्रह्मा गुरु बिस्नु होय खाली भरें ॥
गंगा सम गुरु होय पाप सब धोवहीं ।
सूरज सम गुरु होय तिमिर हरि[१] खोवहीं ।
गुरु ही को करि ध्यान नाम गुरु को जपो ।
आपा दीजै भेंट पुजन गुरु ही थपो ॥
समरथ श्री सुकदेव कहा महिमा करौं ।
अस्तुति कही न जाय सीस चरनन धरौं ॥४१॥

॥ महिमा गुरु सेवा ॥

॥ दोहा ॥

हरि सेवा कृत सौ बरस गुरु सेवा पल चार ।
तौ भी नहीं बराबरी बेदन कियो बिचार ॥४२॥

॥ चौपाइ ॥

गुरु की सेवा साधू जानै । गुरु सेवा कहा मूढ़ पिछानै ॥
गुरु सेवा सबहुन पर भारी । समझ करो सोई नर नारी ॥
गुरु सेवा सूं बिघन बिनासै । दुरमति भाजै पातक नासै ॥
गुरु सेवा चौरासी छूटै । आवागवन का डोरा टूटै ॥
गुरु सेवा सूं प्रेम प्रकासै । उनमत होय मिटै जग आसै ॥
गुरु सेवा परमातम दरसै । तिरगुन तज चौथा पद परसै ॥
श्री सुकदेव बतायो भेवा । चरनदास कर गुरु की सेवा ॥

(१) खींच ।

जोग दान जप तीरथ नाना । गुरु सेवा बिन निरफल जाना ॥
गुरु सेवा बिन बहु पछितैहो । फिर फिर जम के द्वारे जैहो ॥
गुरु सेवा बिन कौन उतारै । भव सागर सूं बाहर डारै ॥
गुरु सेवा बिन जड़ का करिहै । का की नाव बैठ कर तरिहै ॥
गुरु सेवा बिन कछु नहिं सरिहै । महा अंध कूपन में परिहै ॥
गुरु सेवा बिन घट अंधियारा । कैसे प्रगटै ज्ञान उजारा ॥
नरक निवारन श्री सुकदेवा । चरनदास करि तिन की सेवा ॥४३

॥ हरि से गुरु की अधिकता ॥

॥ दोहा ॥

हरि रूठैं कुछ डर नहीं तू भी दे छुटकाय ।
गुरु को राखौ सीस पर सब बिधि करैं सहाय ॥४४॥

॥ अष्टपदी ॥

गुरु को तजि हरि सेव कभी नहिं कीजिये ।
बेमुख को नहिं ठौर नरक में दीजिये ॥
गुरु निंदक नहिं मुक्ति गर्भ फिरि आवई ।
चौरासी लख भुक्ति महा दुख पावई ॥
प्रथम करै गुरु देख परखि चरनौं पड़ै ।
उनकी धारन ध्यान टेक उर में धरै ॥
गरु को रामहि जान कृस्न सम जानिये ।
गरु नरसिंह औतार जो बावन मानिये ॥
गुरु को पूरन जान जो ईस्वर रूपही ।
सब कुछ गुरु को जान यह बात अनूपही ॥
हरि गुरु एकहि जान यह निस्चय लाइये ।
दुविधा ही को बोझ जु वेगि बगाइये ॥
धर्म पिता गुरु जान जु दृढ़ता राखिये ।
लाज सकुच करि कान[1] ढीठता नाखिये[2] ॥

(१) शर्म । (२) न धारो ।

मेरा यह उपदेस हिये में धारियो ।
गुरु चरनन मन राखि सेव तन गारियो[1] ॥
जो गुरु झिड़कैं लाख तौ मुख नहिं मोड़ियो ।
गुरु से नेह लगाय सबन सों तोड़ियो ॥
जो सिष सांचा होय तौ आपा दीजियो ।
चरनदास की सीख समझ कर लीजियो ॥
मो को श्री सुकदेव यही समझाइया ।
बेद पुरानन माहिं जो यों हीं गाइया ॥४५॥

॥ जगतगुरु, सतगुरु और शिष्य निर्णय ॥

॥ कनफूंका गुरु ॥

॥ दोहा ॥

कनफूंका गुरु जगत का राम मिलावन और ।
सो सतगुरु को जानिये मुक्ति दिखावन ठौर ॥४६॥
गलियारे[2] गुरु फिरत हैं घर घर कंठी देत ।
और काज उनकूं नहीं द्रव्य कमावन हेत ॥४७॥
गुरु मिलते ऐसे कहैं कछू लाय मोहिं देहु ।
सतगुरु मिल ऐसे कहैं नाम धनी का लेहु ॥४८॥

॥ सतगुरु ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु डंका देत हैं भक्ति धनी की लेहु ।
पहिले हम कूं भेंटही सीस आपनो देहु ॥४९॥
ऐसा सतगुरु कीजिये जीवत डारै मारि ।
जन्म जन्म की वासना ताकूं देवै जारि ॥५०॥
भरम निवारन भय हरन दूर करन संदेह ।
सोता खोलै प्रेम का सो सम गुरु करि लेहि ॥५१॥
सतगुरु के लच्छन कहै ताकूं ले पहिचान ।
निरखि परखि करि दीजिये तन मन धन अरु प्रान ॥५२॥

---

(१) बहा देना । (२) गली गली ।

जोग दान जप तीरथ नाना। गुरु सेवा बिन निरफल जाना ॥
गुरु सेवा बिन बहु पछितैहौ। फिर फिर जम के द्वारे जैहौ ॥
गुरु सेवा बिन कौन उतारै। भव सागर सूं बाहर डारै ॥
गुरु सेवा बिन जड़ का करिहै। का की नाव बैठ कर तरिहै ॥
गुरु सेवा बिन कछु नहिं सरिहै। महा अंध कूपन में परिहै ॥
गुरु सेवा बिन घट अंधियारा। कैसे प्रगटै ज्ञान उजारा ॥
नरक निवारन श्री सुकदेवा। चरनदास करि तिन की सेवा ॥४३॥

॥ हरि से गुरु की अधिकता ॥

॥ दोहा ॥

हरि रूठैं कुछ डर नहीं तू भी दे छुटकाय।
गुरु को राखौ सीस पर सब बिधि करैं सहाय ॥४४॥

॥ अष्टपदी ॥

गुरु को तजि हरि सेव कभी नहिं कीजिये।
बेमुख को नहिं ठौर नरक में दीजिये ॥
गुरु निंदक नहिं मुक्ति गर्भ फिरि आवई।
चौरासी लख भुक्ति महा दुख पावई ॥
प्रथम करै गुरु देख परखि चरनौं पड़ै।
उनकी धारन ध्यान टेक उर में धरै ॥
गरु को रामहि जान कृस्न सम जानिये।
गरु नरसिंह औतार जो बावन मानिये ॥
गुरु को पूरन जान जो ईस्वर रूपही।
सब कुछ गुरु को जान यह बात अनूपही ॥
हरि गुरु एकहि जान यह निस्चय लाइये।
दुबिधा ही को बोझ जु बेगि बगाइये ॥
धर्म पिता गुरु जान जु दृढ़ता राखिये।
लाज सकुच करि कान[1] ढीठता नाखिये[2] ॥

(१) शर्म। (२) न धारो।

मेरा यह उपदेस हिये में धारियो ।
गुरु चरनन मन राखि सेव तन गारियो[1] ॥
जो गुरु झिड़कें लाख तौ मुख नहिं मोड़ियो ।
गुरु से नेह लगाय सबन सों तोड़ियो ॥
जो सिष सांचा होय तौ आपा दीजियो ।
चरनदास की सीख समझ कर लीजियो ॥
मो को श्री सुकदेव यही समझाइया ।
बेद पुरानन माहिं जो यों हीं गाइया ॥४५॥

॥ जगतगुरु, सतगुरु और शिष्य निर्णय ॥

॥ कनफूंका गुरु ॥

॥ दोहा ॥

कनफूंका गुरु जगत का राम मिलावन और ।
सो सतगुरु को जानिये मुक्ति दिखावन ठौर ॥४६॥
गलियारे[2] गुरु फिरत हैं घर घर कंठी देत ।
और काज उनकूं नहीं द्रव्य कमावन हेत ॥४७॥
गुरु मिलते ऐसे कहैं कछू लाय मोहिं देहु ।
सतगुरु मिल ऐसे कहैं नाम धनी का लेहु ॥४८॥

॥ सतगुरु ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु डंका देत हैं भक्ति धनी की लेहु ।
पहिले हम कूं भेंटही सीस आपनो देहु ॥४९॥
ऐसा सतगुरु कीजिये जीवत डारै मारि ।
जन्म जन्म की वासना ताकूं देवै जारि ॥५०॥
भरम निवारन भय हरन दूर करन संदेह ।
सोता खोलै प्रेम का सो सम गुरु करि लेहि ॥५१॥
सतगुरु के लच्छन कहै ताकूं ले पहिचान ।
निरखि परखि करि दीजिये तन मन धन अरु प्रान ॥५२॥

(१) गला देना । (२) गली गली ।

॥ शिष्य ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु ढूंढ़ा पाइये नहीं सुहेला[1] होय।
सिष भी पूरा कोइ हो सार्नो[2] माटी जोय ॥५३॥
जाति बरनकुल आस्रम मान बड़ाई खोय।
जब सतगुरु के पग लगै सांच शिष्य है सोय ॥ ५४ ॥

॥ भक्तों की महिमा ॥

॥ दूहा ॥

भक्तों की अस्तुति किये तन मन हिया सिराय।
कलि का मैल रहै नहीं बुधि उज्जल हो जाय ॥१॥
साधन की सेवा करो चरन दास चित लाय।
जन्म मरन बंधन कटै जगत व्याधि छुटि जाय ॥२॥
भक्तन की पदवी बड़ी इन्द्रहुं सूं अधिकाय।
तीन लोक के सुख तजे लीन्हेउ हरि अपनाय ॥३॥
अनन भक्ति निहकाम जो करै चरन सोइ दास।
चार मुक्ति बैकुंठ लों सब से रहै निरास ॥४॥
प्रभु अपने मुख सूं कहेव साधू मेरी देह।
उनके चरनन की मुझे प्यारी लागै खेह[3] ॥५॥
आठ सिद्धि वे लें नहीं कनक कामिनी नाहिं।
मेरे संग लागे रहैं कभी न छोड़ें बांहिं ॥६॥
साध हमारी आतमा सब से प्यारे मोहिं।
नारद निस्चै कीजिये सांच कहत हूँ तोहिं ॥७॥
प्रेमी को रिनिया[4] रहूं यही हमारो सूल[5]।
चारि मुक्ति दइ व्याज में दै न सकूं अब मूल[6] ॥८॥
सर्वस दीन्हो भक्त को देख हमारो नेह।
निर्गुन से सर्गुन भयो धरी पसू की देह[7] ॥९॥

---

(१) सहज। (२) सभी हुई। (३) खाक या धूल। (४) करज़दार। (५) उसूल, प्रण। (६) असल। (७) प्रह्लाद भक्त की रक्षा को भगवान ने नरसिंह का अवतार धरा।

मेरे जन मो में रहैं मैं भक्तन के माहिं[1] ।
मेरे अरु मम संत के कुछ भी अंतर नाहिं ॥१०॥
साध सोवै तहं सो रहूँ भोजन संगहि जेंव[2] ।
जो वह गावै प्रेम सूं मैं हू ताली देंव ॥११॥
मम भक्ता जित जित फिरै गोहने[3] लागा जांव ।
जहां तहां रच्छा करौं भक्त बछल मेरो नांव ॥१२॥
भक्त हमारो पग धरै तहां धरूं मैं हाथ ।
लारे[4] लागो ही फिरूं कबहु न छोड़ूं साथ ॥१३॥
मोकों बस कियो जो चहै भक्तन की करि सेव ।
उन में ह्वै कर मैं मिलूं करूं बहुत ही हेव ॥१४॥
प्रिथवी पावन[5] होत है सबही तीरथ आदि ।
चरनदास हरि यौं कहैं चरन धरैं जहं साध ॥१५॥
जिनकी महिमा प्रभु करैं अपने मुखसूं भाखि ।
तिन की कौन बराबरी बेद भरतु हैं साखि[6] ॥१६॥
जिनकी आसा करतु हैं स्वर्ग माहिँ सब देव ।
कबहूं दरसन पाय हैं चरन कमल की सेव ॥१७॥
अपने अपने लोक में सभी करैं उत्साह ।
साधू काया छोड़ कर गवन करै किम राह ॥१८॥
धन नगरी धन देस है धन पुर पट्टन[7] गांव ।
जहँ साधू जन उपजियो ताकी बलि बलि जावं ॥१९॥
भक्त जो आवै जगत में परमारथ के हेत ।
आप तरै तारै परा[8] मंडै भजन के खेत ॥२०॥
भवसागर सूं तारिकर ले जावै बहु जीव ।
साधू केवट राम का पार मिलावै पीव ॥२१॥

---

(१) हृदय । (२) खाता हूँ । (३) साथ । (४) प्यार । (५) पवित्र । (६) गवाही ।
(७) शहर । (८) सफ ।

साधू महिमा को कहै सोभा अधिक अपार।
रसना दोय हजार[1] से सेषहु जावैं हार ॥२२॥
तप के बरस हजार हों सत संगति घड़ि एक।
तौभी सरवरि[2] ना करै सुकदेव किया बिवेक ॥२३॥
ऊंची पदवी साधु की महिमा कही न जाय।
सुरनर मुनि जग भूपही देखत रहे लजाय ॥२४॥

॥ राग सारंग ॥

करो नर हरि भक्तन को संग।
दुख बिसरै सुख होय घनेरो तन मन पलटै अंग ॥
ह्वै निःकाम मिलो संतनसूं नाम पदारथ मंग[3]।
जेहिपाये सब पातक नासैं उपजै ज्ञान तरंग ॥
जो वै दया करैं तेरे पर प्रेम पिलावैं भंग।
जाके अमल दरसहो हरि को नैनन आवै रंग ॥
उनके चरन सरनहीं लागो सेवा करो उमंग।
चरनदास तिनके पग परसन आस करत हैं गंग ॥२॥

॥ विरह और प्रेम ॥

॥ चौपाई ॥

सब मत अधिकी प्रेम बतावैं। जोग जुगत सूं बड़ा दिखावैं।
प्रेमहि सूं उपजै बैराग। प्रेमहिं सूं उपजै मन त्याग।
प्रेम भक्ति सूं उपजै ज्ञाना। होय चांदना मिटै अज्ञाना।
दुरलभ प्रेम जु हाथ न आवै। हरि किरपा कर दें तौ पावै।
प्रेम प्रीत के बस भगवाना। सकल सास्तर कियो बखाना।
भक्त हिये में प्रेम जो जागै। तौ हरि दरसत रहैं जो आगे।
सकल सिरोमनि प्रेमहिं जानो। चरनदास निस्चै मन आनो ॥१॥

---

(१) शेषनाग के हजार जबान हैं अगर दो हजार हो जायं तौभी साधु महिमा न कर सकै। (२) बराबरी। (३) माँगो।

प्रेम बराबर जोग ना प्रेम बराबर ज्ञान।
प्रेम भक्ति बिन साधिबो सबही थोथा ध्यान ॥२॥
प्रेम छुटावे जक्त सूं प्रेम मिलावै राम।
प्रेम करै गति और हीं ले पहुंचै हरि धाम ॥३॥
प्रेमी जन हरि आप हो आपा निकसै नाहिं[१]।
गुरु सुकदेव दिखावईं समझ देखि मन माहिं ॥४॥
हिरदै माहीं प्रेम जो नैनों झलकै आय।
सोइ छका हरि रस पगा वा पग परसो धाय ॥५॥
गद गद बानी कंठ में आंसू टपकै नैन।
वह तो बिरहिन राम की तलफत है दिन रैन ॥६॥
हाय हाय हरि कब मिलैं छाती फाटी जाय।
ऐसा दिन कब होयगा दरसन करौं अघाय ॥७॥
बिन दरसन कल ना पड़ै मनुआं धरै न धीर।
चरनदास की राम बिन कौन मिटावै पीर ॥८॥
पीव बिना तौ जीवना जग में भारी जान।
पिया मिलैं तौ जीवना नहीं तो छूटै प्रान ॥९॥
मुख पियरो सूखे अधर[२] आंखैं खरी उदास।
आह जो निकसै दुख भरी गहिरे लेत उसास[३] ॥१०॥
वह बिरहिन बौरी भई जानत ना कोइ भेद।
अगिन बरै हियरा जरै भये कलेजे छेद ॥११॥
अपने बस वह ना रही फँसी बिरह के जाल।
चरनदास रोवत रहैं सुमिर २ गुन ख्याल ॥१२॥
वा तन को बिरहा लगो ज्यों घुन लागो दार।
दिन दिन पीरी होत है पिया न बूझै सार ॥१३॥
वै नहिं बूझैं सार ही बिरहिन कौन हवाल।
जब सुधि आवै लाल की चुभत कलेजे भाल[४] ॥१४॥

---

(१) आपा का निशान बाकी नहीं रहता। (२) होंठ। (३) सांस। (४) कांटा।

साधू महिमा को कहै सोभा अधिक अपार।
रसना दोय हजार[1] से सेषहु जावैं हार ॥२२॥
तप के बरस हजार हों सत संगति घड़ि एक।
तौभी सरवरि[2] ना करै सुकदेव किया बिवेक ॥२३॥
ऊंची पदवी साधु की महिमा कही न जाय।
सुरनर मुनि जग भूपही देखत रहे लजाय ॥२४॥

॥ राग सारंग ॥

करौ नर हरि भक्तन को संग।
दुख बिसरै सुख होय घनेरो तन मन पलटै अंग ॥
ह्वै निःकाम मिलो संतनसूं नाम पदारथ मंग[3]।
जेहिपाये सब पातक नासें उपजै ज्ञान तरंग ॥
जो वै दया करैं तेरे पर प्रेम पिलावैं भंग।
जाके असल दरसहो हरि को नैनन आवै रंग ॥
उनके चरन सरनहीं लागो सेवा करो उमंग।
चरनदास तिनके पग परसन आस करत हैं गंग ॥२॥

॥ विरह और प्रेम ॥

॥ चौपाई ॥

सब मत अधिकी प्रेम बतावैं। जोग जुगत सूं बड़ा दिखावैं ॥
प्रेमहि सूं उपजै बैराग। प्रेमहिं सूं उपजै मन त्याग ॥
प्रेम भक्ति सूं उपजै ज्ञाना। होय चांदना मिटै अज्ञाना ॥
दुरलभ प्रेम जु हाथ न आवै। हरि किरपा कर दें तो पावै ॥
प्रेम प्रीत के बस भगवाना। सकल सास्तर कियो बखाना ॥
भक्त हिये में प्रेम जो जागै। तौ हरि दरसत रहैं जो आगे ॥
सकल सिरोमनि प्रेमहिं जानो। चरनदास निस्चै मन आनो ॥१॥

(१) शेषनाग के हजार जबान हैं अगर दो हजार हो जायं तौभी साधु महिमा न कर सकै। (२) बराबरी। (३) माँगो।

प्रेम बराबर जोग ना प्रेम बराबर ज्ञान।
प्रेम भक्ति बिन साधिबो सबही थोथा ध्यान २॥
प्रेम छुटावे जक्त सूं प्रेम मिलावै राम।
प्रेम करै गति और हीं ले पहुंचै हरि धाम ॥३॥
प्रेमी जन हरि आप हो आपा निकसै नाहिं[१]।
गुरु सुकदेव दिखावईं समझ देखि मन माहिं ॥४॥
हिरदै माहीं प्रेम जो नैनों झलकै आय।
सोइ छका हरि रस पगा वा पग परसो धाय ॥५॥
गद गद बानी कंठ में आंसू टपकै नैन।
वह तो बिरहिन राम की तलफत है दिन रैन ॥६॥
हाय हाय हरि कब मिलैं छाती फाटी जाय।
ऐसा दिन कब होयगा दरसन करौं अघाय ॥७॥
बिन दरसन कल ना पड़ै मनुआं धरै न धीर।
चरनदास की राम बिन कौन मिटावै पीर ॥८॥
पीव बिना तौ जीवना जग में भारी जान।
पिया मिलैं तौ जीवना नहीं तो छूटै प्रान ॥९॥
मुख पियरो सूखे अधर[२] आंखैं खरी उदास।
आह जो निकसै दुख भरी गहिरे लेत उसास[३] ॥१०॥
वह बिरहिन बौरी भई जानत ना कोइ भेद।
अगिन बरै हियरा जरै भये कलेजे छेद ॥११॥
अपने बस वह ना रही फँसी बिरह के जाल।
चरनदास रोवत रहै सुमिर २ गुन ख्याल ॥१२॥
वा तन को बिरहा लगो ज्यों घुन लागो दार।
दिन दिन पीरी होत है पिया न बूझै सार ॥१३॥
वै नहिं बूझैं सार ही बिरहिन कौन हवाल।
जब सुधि आवै लाल की चुभत कलेजे भाल[४] ॥१४॥

(१) आपा का निशान बाकी नहीं रहता। (२) होंठ। (३) सांस। (४) कांटा।

पीव चहौ कै मत चहौ वह तौ पी की दास।
पिय के रंग राती रहै जग सूं होय उदास ॥१५॥
पी पी करते दिन गया रैनि गई पिय ध्यान।
बिरहिन के सहजै सधै भक्ति जोग अरु ज्ञान॥१६॥
बिरहिन एकै राम बिन और न कोई मीत।
आठ पहर साठौ[1] घड़ी पिया मिलन की चीत ॥१७॥
जाप करै तौ पीव का ध्यान करै तौ पीव।
पिव बिरहिन का जीव है जिव बिरहिन का पीव॥१८॥

राग बिहागरा

सुधि बुधि सब गइ खोय री मैं इस्क दिवानी।
तलफत हूं दिन रैन ज्यों मछली बिन पानी॥
बिन देखे मोहिं कल न परत है देखत आंख सिरानी[2]।
सुधि आये हिय में दव[3] लागै नैनन बरखत पानी॥
जैसे चकोर रटत चंदा को जैसे पपिहा स्वांती।
ऐसे हम तलफत पिय दरसन बिरहबिथा यहि भांती॥
जब ते मीत बिछोहा हूवा तब ते कछु न सुहानी।
अंग अंग अकुलात सखी री रोम राम मुरझानी॥
बिन मनमोहन भवन अंधेरी भरि २ आवै छाती।
चरनदास सुकदेव मिलावो नैन भये मोहिं घाती[4] ॥१९॥

॥ राग सोरठ ॥

हमारो नैना दरस पियासा हो।
तन गयो सूखि हाय हिये बाढ़ो जीवन हूं वहि आसा हो॥
बिछुरन थारो[5] मरन हमारो मुख में चलै न ग्रासा[6] हो।
नींद न आवै रैनि बिहावै[7] तारे गिनत अकासा हो॥
भये कठोर दरस नहिं जाने तुमकू नेक न सांसा[8] हो॥
हमरी गति दिन दिन औरै ही विरह बियोग उदासा हो॥

---

(१) चौंसठ। (२) सीतल हुई। (३) आग। (४) दुखदाई। (५) तेरा। (६) लुकमा या कौर। (७) बीतती है। (८) फ़ुरसत।

सुकदेव पियारे मत रहु न्यारे आनि करो उर बासा हो ।
रनजीता[1] अपनो करि जानी निज करि चरनन दासा हो ।२०।

॥ राग सोरठ ॥

अंखियां गुरु दरसन की प्यासी ।
इक टक लागी पंथ निहारूं तन सूं भई उदासी ॥
रैन दिना मोहिं चैन नहीं है चिन्ता अधिक सतावै ।
तलफत रहूं कल्पना भारी निस्चल बुधि नहिं आवै ॥
तन गयो सूख हूक[2] अति लागी हिरदे पावक बाढ़ी ।
खिन में लेटी खिन में बैठी घर अंगना खिन ठाढ़ी ।
भीतर बाहर संग सहेली बातन ही समझावैं ।
चरनदास सुकदेव पियारे नैनन ना दरसावैं ॥२१॥

मन, इन्द्री, और पांच बिरोधियों के बिकार और उनके मोड़ने का उपदेश ॥

॥ दोहा ॥

बहु बैरी घट में बसैं तू नहिं जीतत कोय ।
निस दिन घेरे ही रहैं छुटकारा नहिं होय ॥१॥
मनही खेलै खेल सब मन ही कर अभिमान ।
मन हीह जग ह्वै रहेव अब सुन मन का ज्ञान ॥२॥

॥ मन ॥

बहु रूपी बहु तरंग यह बहु तरंग बहु चाव ।
बहुत भांति संसार में करि करि घने उपाव ॥३॥
आवै क्रोध तरंग जब होत जुवा[3] के रूप ।
काम लहर कबहूं उठै ताको होत सरूप ॥४॥
लोभ कामना जब उठै जभी लोभ रंग होय ।
मोह कल्पना के उठे मोह बरन होय सोय ॥५॥

---

(१) चरनदास जी का मा बाप का रक्खा हुआ नाम (२) शूल का दर्द । (३) जवान ।

या मन के जाने बिना होय न कबहूं साध।
जक्क बासना ना छुटै लहै न भेद अगाध ॥६॥
तैं मन कूं जाना नहीं करी न या की सार।
चौरासी छूटी नहीं उपजा बारम्बार ॥७॥
मन ने आयु गंवाइया ज्ञान बुझायो दीव।
करम लगो भरमत फिरो मिलो न अपने पीव ॥८॥
दौरि दौरि रस ओर हीं होय रहा कंगाल।
नातरु आगे भूप था ऊंचा बड़ा दयाल ॥ ९ ॥
पांचों इन्द्री स्वाद में भयो निपट आधीन।
राज बड़ाई सब नसी भयो मूढ़ मतिहीन ॥१०॥
सरकि जाय बिष ओरहीं बहुरि न आवै हाथ।
भजन माहिं ठहरै नहीं जो गहि राखूं नाथ[1] ॥११॥
मन निस्चल आवै नहीं निकसि निकसि भजि जाय।
चरनदास यों कहत हैं काहू की न बसाय ॥१२॥
पचि हारे ज्ञानी तपी रहे बहुत सिर मार।
मन परेत सूं डर लगै लै डूबै मंझ धार ॥१३॥
यह मन भूत समान है दौड़ै दांत पसार।
बांस गाड़ि उतरै चढ़ै सब बल जावै हार ॥ १४॥
भजै[2] तौ जानिन दीजिये घेरि घेरि करि लाव।
या मन कूं परचाय के ध्यानहिं माहिं लगाव ॥१५॥
और कहूं बिधि दूसरी सुनियो चित्त लगाय।
राम नाम मन सूं जपै चंचलता थकि जाय ॥१६॥
पवन रुकै जब मन थकै और दृष्टि ठहराय।
ऐसी साधन साधिये गुरु गम भेद मिलाय ॥१७॥
इन्द्री रोकै मन रुकै अरु उत्तम बिधि येहु।
चरनदास यों कहत हैं यह साधन करि लेहु ॥१८॥

---
(१) नकेल। भागै।

इन्द्रिन कूं मन बसि करै मन कूं बसि करै पौन ।
अनहद बसि करै बायु कूं अनहद कूं ले तौन ॥१९॥
या कूं नाम समाधि है मन तामें ठहराय ।
जन्म जन्म की बासना ता कूं दग्ध[1] कराय ॥२०॥
इन्द्री पलटै मन बिषै मन पलटै बुधि माहिं ।
बुधि पलटै हरि ध्यान में फेरि होय लय[2] जाहिं ॥२१॥
दग्ध बासना होय जब आवा गवन नसाय ।
कहैं गुरु सुकदेव जी मुक्ति रूप ह्वै जाय ॥२२॥
जगत बासना के तजे माया कूं न बसाय ।
कर्म छुटै मिटै जीवता मुक्ति रूप ह्वै जाय ॥२३॥
फँसे न इन्द्री स्वाद में चरन कमल में ध्यान ।
पर आसा कोइ ना रहै लगै न माया बान ॥२४॥
सब में अधिको ज्ञान है ता से ऊंचो ध्यान ।
ध्यान मिलावै पीव कूं पावै पद निरबान ॥२५॥
ध्याता[3] ध्येय[4] कैसे मिलै होय न बिच में ध्यान ।
तीनों एक हुए बिना लहै न पद निरबान ॥२६॥

॥ चौपाई ॥

मन कूं सतसंगति लै जावो । कनों हरि जस[5] कथा सुनावो ॥
भांति भांति के रँग ललचावै । तौ हरि के रंग क्यों न रंगावै ॥
तौ या को ज्ञानी ही कीजै । जक्त ओर जाने नहिं दीजै ॥
कै दीजै हरि ही कूं ध्यानू । राम भक्ति में या कूं सानू ॥
कै कीजै यह जोगी पूरा । याहि सुनावो अनहद तूरा ॥
या मन कूं कीजै बैरागी । या कूं कीजै सरबस त्यागी ॥
जग रँग उतरि ब्रह्म रँग लागै । जा ते कर्म भर्म भय भागै ॥
चरनदास सुकदेव बतावैं । मन फेरन की राह दिखावैं ॥२७॥

---

(१) जलाना । (२) तद्रूप । (३) ध्यान करने वाला । (४) जिसका ध्यान करता है ।
(५) महिमा ।

॥ इन्द्रियों का बर्णन ॥

॥ दोहा ॥

इन्द्रिन के बस मन रहै मन के बस रहै बुद्ध ।
कहो ध्यान कैसे लगै ऐसा जहां बिरुद्ध ॥२८॥
जित जित इन्द्री जात है तित मन कूं ले जात ।
बुधि भी संगहि जात है यह निस्चय करि बात ॥२९॥
जित इन्द्री मन हूं गया रही कहां सूं बुद्धि ।
चरनदास यों कहत हैं करि देखो तुम सुद्धि ॥३०॥
इन्द्री मन के बस करै मन करै बुधि के संग ।
बुधि राखै हरि पद जहां लागै ध्यान अभंग ॥३१॥
इन्द्री मन मिलि होत है बिषय बासना चाह ।
उपजै जैसे काम हीं नारी मिलि अरु नाह[1] ॥३२॥
इन्द्रिन सूं मन जुदा करि सुरति निरति करि सोध ।
उपजै ना बिष बासना चरनदास कर बोध ॥३३॥
इन्द्री रोके ते रुकें और जतन नहिं कोय ।
मन चंचल रिझवार है रसिक सवादी होय ॥३४॥
चलो करै थिर ना रहै कोटि जतन करि राख ।
यह जबहीं बस होयगा इन्द्रिन के रसनाख[2] ॥३५॥
न्यारे न्यारे चहत हैं अपने अपने स्वाद ।
इन पांचो में प्रीत है कछु न वाद बिबाद ॥३६॥
दुर्जन के फूटे बिना तेरी होय न जीत ।
चरनहिदास विचारि करि ऐसी कहिये रीत ॥३७॥
जुदी जुदी पांचो कहूं एक एक का भेद ।
जो कोइ इन कूं वस करै सबहीं छूटैं खेद ॥३८॥

---

(१) पुरुष । (२) छोड़ दे या भुला दे ।

१ आंख इन्द्री

दीपक त्रिया निहारि करि गिरै पतंग ज्यों जाय।
कछू हाथ आवै नहीं उलटो आप जराय ॥३६॥
ऐसी इन्द्री आंख की सो अपनी नहिं होय।
गुरु सुकदेव बतावई चरनदास सुन लोय ॥४०॥
दरसन कीजे साध का कै गुरु का कर लोय।
जहं तहं ब्रह्महिं देखिये दुबिधा दुरमति खोय ॥४१॥
बैरी मिंतर एकसा एकै रूपक रूप।
ऐसी होवै दृष्टिहीं जब समझै मन भूप ॥४२॥

२ कान इन्द्री

॥ दोहा ॥

मन दै सुनिये हरि कथा सुनिये हरि जस कान।
ताहि बिचार जो कीजिये होय भक्ति को ज्ञान ॥४३॥
सुनि सुनि उपजै सुबुधि हीं लागै हरि को रंग।
सुनि सुनि उपजै कुबुधि हीं खोटी उठै तरंग ॥४४॥
ऐसी इन्द्री कान की जाके जुगल सुभाव।
कथा कीरतन हीं सुनो करि करि कोटि उपाव ॥४५॥
बचन सुनो गुरु साध के मनको लावो मोर।
बिषय बासना सूं निकसि आवै हरि की ओर ॥४६॥
सरवन इन्द्री में कहे दोनों अंग दिखाय।
जिह्वा इन्द्री कहत हैं चरनदास चित लाय ॥४७॥

३ जिह्वा इन्द्री

॥ दोहा ॥

कुटिल जो इन्द्री जीभ की चाहै खट्ट रस स्वाद।
या बस होइ औगुन करै जन्म जाय बरबाद ॥४८॥

जिह्वा के जीते बिना गये जन्म सब हार।
चरनदास यों कहत हैं भये जगत में ख्वार ॥४९॥
बंसी डारी ताल में मछरी लागी आय।
जिह्वा कारन जिव दियो तलफ तलफ मरि जाय ॥५०॥
तजा न जिह्वा स्वाद कूं वा संग दीन्हे प्रान।
जो कोइ ऐसा जगत में सो अज्ञानी जान ॥५१॥
या सूं ले हरि नाम हीं गुनाबाद हीं भाख।
जो बोले तौ सांच हीं नाहीं मुख में राख ॥५२॥
मीठा बचन उचारिये नवता[1] सबसूं बोल।
हिरदय माहिं बिचारि करि जब मुख बाहर खोल ॥५३॥
बिना स्वाद हीं खाइये राम भजन के हेत।
चरनदास कहैं सूरमा ऐसे जीतौ खेत ॥५४॥
जो बोलै तौ हरि कथा मौन गहै तौ ध्यान।
चरनदास यह धारना धारै सो सज्ञान ॥५५॥

४ त्वचा इन्द्री

॥ दोहा ॥

त्वचा सो इन्द्री काम की नित ही खेलै दाव।
पसु पंछी सुर नर असुर फँसे आप करि चाव ॥५६॥
त्वचा स्वाद सब बस भये फंदे जगत के माहिं।
जो कोई निकसो चहै सो भी निकसै नाहिं ॥५७॥
धोखे की हथनी लखी आयो गज ललचाय।
खंदक माहीं रुकि गयो सीस धुनै पछिताय ॥५८॥
जंगल में आनन्द सूं बहुतै केलि कराय।
अब तौ द्वारे भूप के परो बंध में आय ॥५९॥
ऐसे ही ये नर फँदो देखि कामिनी रूप।
जन्म गंवायो दुख भरो पड़ो अविद्या कूप ॥६०॥

---

(१) आधीनता से।

करी न हरि की भक्ति हीं गुरु सेवा तजि दीन्ह ।
सुनी न हरि की गुन कथा सत संगति नहिं कीन्ह ॥६१॥
फिरि ऐसो कब होयगो पावै मानुष देह ।
अब तौं चौरासी बिषे जाय कियो उन ग्रेह[1] ॥६२॥
जीतौ इन्द्री त्वचा की कहिया श्री सुकदेव ।
यासे तप ही कीजिये चरनदास सुन लेव ॥६३॥

५. नासिका इन्द्री

॥ दोहा ॥

सुगंध ओर हरखै नहीं दुरगन्धै न रिसाय ।
ऐसी जीतै नासिका मन भंवरा ठहराय ॥६४॥
समझन कूं तुक एक है भूलन कूं तुक लाख ।
गुन औगुन इन्द्री कहे सो तू मन में राख ॥६५॥
जो इन्द्रिन के बसि भयो बांधो नरकै जाय ।
चौरासी भरमत फिरै गर्भ योनि दुख पाय ॥६६॥
जो इन्द्रिन के बसि भयो पावै ना आनंद ।
बार बार जग माहिं हीं छूटै ना संबंद[2] ॥६७॥
भक्ति माहिं चित ना लगै सब हीं बिगड़ें काम ।
जो इन्द्रिन के बसि भयो ताको मिलै न राम ॥६८॥
चरनदास यों कहत हैं इन्द्री जीतन ठान ।
जग भूलै हरि कूं मिलै पावै पद निर्बान ॥६९॥

पांच विरोधियों का वर्णन

॥ दोहा ॥

जोग तपस्या भक्तिं नहकूगाड़नबिपांच ।
जीवत दुख दें जक्त में मुए नरक दें आंच ॥७०॥
काम क्रोध मोह लोभ ये और पांचवां गर्व ।
राज करैं वसुधा विषै इन वस कीन्हे सर्व ॥७१॥

---

(१) घर । (२) सम्बन्ध ।

जिह्वा के जीते बिना गये जन्म सब हार।
चरनदास यों कहत हैं भये जगत में ख्वार ॥४९॥
बंसी डारी ताल में मछरी लागी आय।
जिह्वा कारन जिव दियो तलफ तलफ मरि जाय ॥५०॥
तजा न जिह्वा स्वाद कूं वा संग दीन्हे प्रान।
जो कोइ ऐसा जगत में सो अज्ञानी जान ॥५१॥
या सूं ले हरि नाम हीं गुनाबाद हीं भाख।
जो बोले तौ सांच हीं नाहीं मुख में राख ॥५२॥
मीठा बचन उचारिये नवता[1] सबसूं बोल।
हिरदय माहिं बिचारि करि जब मुख बाहर खोल ॥५३॥
बिना स्वाद हीं खाइये राम भजन के हेत।
चरनदास कहैं सूरमा ऐसे जीतौ खेत ॥५४॥
जो बोलै तौ हरि कथा मौन गहै तौ ध्यान।
चरनदास यह धारना धारै सो सज्ञान ॥५५॥

४ त्वचा इन्द्री

॥ दोहा ॥

त्वचा सो इन्द्री काम की नित ही खेलै दाव।
पसु पंछी सुर नर असुर फँसे आप करि चाव ॥५६॥
त्वचा स्वाद सब बस भये फंदे जगत के माहिं।
जो कोई निकसो चहै सो भी निकसै नाहिं ॥५७॥
धोखे की हथनी लखी आयो गज ललचाय।
खंदक माहीं रुकि गयो सीस धुनै पछिताय ॥५८॥
जंगल में आनन्द सूं वहुतै केलि कराय।
अब तौ द्वारे भूप के परो वंध में आय ॥५९॥
ऐसे ही ये नर फँदो देखि कामिनी रूप।
जन्म गंवायो दुख भरो पड़ो अविद्या कूप ॥६०॥

करी न हरि की भक्ति हीं गुरु सेवा तजि दीन्ह ।
सुनी न हरि की गुन कथा सत संगति नहिं कीन्ह ॥६१॥
फिरि ऐसो कब होयगो पावै मानुष देह ।
अब तौ चौरासी विषै जाय कियो उन ग्रेह[1] ॥६२॥
जीतौ इन्द्री त्वचा की कहिया श्री सुकदेव ।
यासे तप ही कीजिये चरनदास सुन लेव ॥६३॥

५ नासिका इन्द्री

॥ दोहा ॥

सुगंध ओर हरखै नहीं दुरगन्धै न रिसाय ।
ऐसी जीतै नासिका मन भंवरा ठहराय ॥६४॥
समझन कूं तुक एक है भूलन कूं तुक लाख ।
गुन औगुन इन्द्री कहे सो तू मन में राख ॥६५॥
जो इन्द्रिन के बसि भयो बांधो नरकै जाय ।
चौरासी भरमत फिरै गर्भ योनि दुख पाय ॥६६॥
जो इन्द्रिन के बसि भयो पावै ना आनंद ।
बार बार जग माहिं हीं छूटै ना संबंद[2] ॥६७॥
भक्ति माहिं चित ना लगै सब हीं बिगड़ें काम ।
जो इन्द्रिन के बसि भयो ताको मिलै न राम ॥६८॥
चरनदास यों कहत हैं इन्द्री जीतन ठान ।
जग भूलै हरि कूं मिलै पावै पद निर्बान ॥६९॥

पांच विरोधियों का वर्णन

॥ दोहा ॥

जोग तपस्या भक्ति नहकूगाड़नविपांच ।
जीवत दुख दें जक्त में मुए नरक दें आंच ॥७०॥
काम क्रोध मोह लोभ ये और पांचवां गर्व ।
राज करैं वसुधा विषै इन वस कीन्हे सर्व ॥७१॥

(१) घर । (२) सम्बन्ध ।

१ काम

॥ चौपाई ॥

यह काम बुरा रे भाई । सब देवै तन बौराई ॥
पंचों में नाक कटावै । वह जूती मार दिलावे ॥
मुंह काला गधे चढ़ावै । बहु लोग तमासे आवै ॥
झिड़का ज्यों डोले कुत्ता । सब हीं के मन सूं उत्ता[1] ॥
कोइ नीके मुख नहिं बोलै । सरमिंदा हो जग डोलै ॥
वह जीवत नरक संझारी । सुन चेतो नर अरु नारी ॥
काम अंग तजि दीजै । सत संगतिहीं करि लीजै ॥
अस कहैं चरन हीं दासा । हरि भक्तन में कर बासा ॥७२॥

॥ दोहा ॥

तन मन जारै काम हीं चित कर डावांडोल ।
धरम सरम सब खोय के रहै आप हिये खोल ॥७३॥
नर नारी सब चेतियो दीन्हो प्रगट दिखाय ।
पर तिरिया पर पुरुस हो भोग नरक को जाय ॥७४॥

॥ राग सोरठ ॥

अरे नर पर नारी मत तक रे ।
जिन जिन ओर[2] तको डायन की, बहुतन कूं गइ भख रे ॥
दूध आक[3] को पात कटैया[4] झाल अगिन की जान ।
सिंह मुखारे विष कारे को, ऐसे ताहि पिछानो ॥
खानि नरक की अति दुखदाई, चौरासी भरमावै ।
जनम जनम कूं दाग लगावै, हरि गुरु तुरत छुटावै ॥
जग में फिरि फिरि महिमा खोवै, राखै तन मन मैला ।
चरनदास सुकदेव चितावें, सुमिरो राम सुहेला ॥७५॥

॥ दोहा ॥

पर नारी कै आपनी दोनों बुरी बलाय ।
घर बाहर की आग ज्यों देवै हाथ जलाय ॥७६॥

---

(१) उतरा हुआ । (२) तरफ । (३) मदार । (४) भटकटैया जो एक कांटेदार झाड़ होती है ।

२ क्रोध

॥ दोहा ॥

क्रोध महा चंडाल है जानत सब कोय।
जाके अंग बरनन करूं सुनियो सुरत समोय ॥७७॥
जेहिं घट आवै धूम सूं करै बहुत ही ख्वार।
पति खोवै बुधि कूं हनै कहा पुरुस कह नार ॥७८॥

॥ चौपाई ॥

वह बुद्धि भ्रष्ट करि डारै। वह मारहिं मार पुकारै ॥
वह सब तन हिंसा छावै। कहिं दया न रहने पावै ॥
वह गुरु सूं बोलै बेंड़ा। साधों सूं डोलै ऐंड़ा ॥
वह हरि सूं नेह छुटावै। वह नरक माहिं ले जावै ॥
वह आतम घाती जानौ। वह महा मूढ़ पहिचानौ ॥
सोंटों की मार दिलावै। कबहूं कै सीस कटावै ॥
वह नीच कमीना कहिये। ऐसे सूं डरता रहिये ॥
वह निकट न आवन दीजै। अरु छिमा अंक[1] भरि लीजै॥
जब छिमा आय कियो थाना। तब सबही क्रोध हिराना ॥
कहैं गुरु सुकदेव खिलारी। सुन चरनदास उपकारी ॥७९॥

३ मोह

॥ दोहा ॥

मोह बड़ा दुख रूप है ताकूं मारि निकास।
प्रीत जगत की छोड़ दे जब होवै निर्बास ॥८०॥
जग माहीं ऐसे रहो ज्यों अंबुज[2] सर[3] माहिं।
रहैं नीर के आसरे पै जल छूवत नाहिं ॥८१॥
जग माहीं ऐसे रहो ज्यों जिह्वा मुख माहिं।
घीव घना भच्छन करै तौभी चिकनी नाहिं ॥८२॥
ऐसा हो जो साध हो लिये रहै वैराग।
चरन कमल में चित धरै जग में रहै न पाग ॥८३॥

---

(१) गोद। (२) कमल। (३) तालाब।

मोह बली सब सूं अधिक महिमा कहि न जाय।
जा कूं बांधो जग सबै छूटै ना बौराय ॥८४॥
स्वारथ ही के सब सगे कुटुंब मित्र कुल गोत।
परमारथ समझावहीं जो दयाल गुरु होत ॥८५॥
परमारथ में दुख मिटै कलह कल्पना जाय।
स्वारथ माहीं सुख नहीं तामें चित न लगाय ॥८६॥
स्वारथ में चिन्ता घनी जो ह्वां करिहौ ग्रेह।
बिना आग की चिता में जीवत जरि है देह ॥८७॥
चिन्ता घट में नागिनी ताके मुख हैं दोय।
निस दिन खाये जात है जान सकत नहिं कोय ॥८८॥
जा घट चिन्ता नागिनी ता मुख जप नहिं होय।
जो टुक आवै याद भी उहीं जाय फिरि खोय ॥८९॥
चिन्ता ही सूं लगत है चरनदास उर आग।
तहां ध्यान हरि चरन कूं कैसे ही अब लाग ॥९०॥
जक्त बासना के बिषै घर चिन्ता का जान।
जग की आसा छोड़िकर हरि सुमिरन ही ठान ॥९१॥
आसा नदिया में चलै सदा मनोरथ नीर।
परमारथ उपजै बहै मन नहिं पकरै धीर ॥९२॥
धीर बिना नहिं ध्यान है निस्चल जप नहिं होय।
जो चाहै हरि भक्ति कूं जक्त बासना खोय ॥९३॥
जब लग जग सूं प्रीति है तब लग दुक्ख अपार।
भय भारी चिन्ता घनी भवन पिछानौदार[1] ॥९४॥
जग सूं छुटि बाहर परै उसी समय सब चैन।
उपजै आनंद परम हीं तहँ कुछ लेन न देन ॥९५॥
रहै एक हरि भक्ति हीं बाधा सब छुटि जाहिं।
जबै राम अपनो करैं बेगहिं पकरैं बांहिं ॥९६॥

(१) सूली।

४ लोभ

लोभ नीच बर्नन करूं महा पाप की खानि।
मंत्री जा का झूठ है बहुत अधर्मी जानि ॥९७॥
तृस्ना जाकी जोय[1] है सो अंधा करि देय।
घटी बढ़ी सूझै नहीं नहीं काल का भेय ॥९८॥
दम्भ मकर छल भगल जो रहत लोभ के संग।
मुए नरक ले जायंगे जीवत करैं अतंग[2] ॥९९॥
देहैं धर्म छोड़ाय हो आन धर्म ले जाय।
हरि गुरु ते बेमुख करैं लालच लोभ लगाय ॥१००॥
चहूं देस भरमत फिरैं कलह[3] कल्पना साथ।
लोभ खंभ उठि उठि लगैं दोऊ पसारे हाथ ॥१०१॥
चींटी बांदर खगन[4] कूं लोभ बहुत दुख दीन।
या कूं तजि हरि कूं भजे चरनदास परबीन ॥१०२॥
लोभ घटावे मान कूं करै जगत आधीन।
धर्म घटा भिष्ठल[5] करै करै बुद्धि को हीन ॥१०३॥
लोभ गये तें आवई महा बली संतोष।
त्याग सत्य कूं संग ले कलह निवारन सोक ॥१०४॥
घट आवै संतोष ही काह चहै जग भोग।
स्वर्ग आदि लौं सुख जिते सब कूं जानै रोग ॥१०५॥
संतोषी निर्मल दसा रहै राम लौ लाय।
आसन ऊपर दृढ़ रहै इत उत कूं नहिं जाय ॥१०६॥
काहू से नहिं राखिये काहू विधि की चाह।
परम संतोषी हूजिये रहिये बेपरवाह ॥१०७॥
चाह जगत की दास है हरि अपना न करै।
चरनदास यों कहत हैं व्याधा नाहिं टरै ॥१०८॥

---

(१) स्त्री। (२) दुखी, हैरान। (३) लड़ाई। (४) पक्षी। (५) गंदा।

५ अहंकार

॥ दोहा ॥

अभिमानी चढ़ि कर गिरे गये बासना माहिं ।
चौरासी भरमत भये बबहीं निकसैं नाहिं ॥१०९॥
अभिमानी भींजे गये लूट लिये धन बाम[१] ।
निरअभिमानी हो चले पहुँचे हरि के धाम ॥११०॥
चरनदास यों कहत हैं सुनियो संत सुजान ।
मुक्ति मूल आधीनता नरक मूल अभिमान ॥१११॥
मन में लाय बिचार कूं दीजै गर्ब निकार ।
नान्हापन तब आय हैं छूटै सकल बिकार ॥११२॥

॥ चौपाई ॥

रूपवंत गरबावै । कोइ मो सम[२] दृष्टि न आवै ॥
तरुनापा गर्बाना । वह अंधरा होवै राना ॥
कहै धन मद में परबीना । सब मेरे ही आधीना ॥
कहै कुल अभिमानी सूचा । मैं सब जातिन में ऊंचा ॥
वह विद्या गर्व जो भारी । करै बाद बिबाद अनारी ॥
अरु भूप करै अभिमाना । उन आपे हीं कूं जाना ॥
उन काल नहीं पहिचाना । सो मार करै घमसाना ॥
गुरु सुकदेव चितावैं । तोहि परगट नैन दिखावैं ॥
जम बांधि पकरि ले जावें । वै बहुतै त्रास दिखावैं ॥
जब कहां जाय अभिमाना । मोर नीका सुन यह ताना ॥
फिर डारै नरक मंझारी । सुन चेतौ नर अरु नारी ॥
तो मद मत्सर[३] तजि दीजै । साधौं के चरन गहीजै ॥
हरि भक्ति करौ चित लाई । जब सकल व्याधि छुटि जाई ॥
करि जात बरन कुल दूरा । हो सतसंगति में पूरा ॥

(१) स्त्री, माया । (२) मुझ सा । (३) विरोध ।

जब मुक्ति धाम कूं पावै। फिर गर्भ जोनि नहिं आवै॥
कहैं गुरु सुकदेव बखानो। यह चरनदास मति आनो॥११३॥

॥ दोहा ॥

पांचो उतरैं भूत जब हैहो ब्रह्म अरूप।
आनंद पद को पाइ हो जित है मुक्ति सरूप॥११४॥

॥ चौपाई ॥

पांचो चोर महा दुखदाई। सो या जग में देहिं फंसाई॥
तन मन कूं बहु व्याधि लगावैं। कायक बाचक पाप चढ़ावैं॥
फिर चौरासी माहिं फिरावैं। जठर[1] अगिन में ताहि तपावैं॥
जन्म मरन भारी दुख पावै। मनुष देहि का सर्बस जावै॥
तीन लोक में डोलै हाला। सुर पुर मृत्यु और पाताला॥
कैसे मुक्ति धाम कूं पावै। जो इन्द्रिन के बस हो जावै॥
छूटै जब गुरु किरपा करैं। चरनदास के सिर कर धरैं॥११५॥

॥ नवधाभक्ति[2] ॥

॥ अष्ठपदी ॥

नवधा भक्ति संभारि अंग नौ जानि ले।
सर्वन चितवन और कीर्तन मानि ले॥
सुमिरन बंदन ध्यान और पूजा करो।
प्रभु सूं प्रीति लगाय सुरति चरनन धरो॥
होकरि दासहिं भाव साध संगति रखो।
भक्तन की करि सेव यही मति है भखो॥
आपा अर्पन देइ धीर्ज दृढ़ता गहो।
छिमा सील संतोष दया धारे रहो॥
यह जो मैंने कहा वेद का मूल है।
जोग ज्ञान वैराग सबन का फूल है॥

(१) पेट अथवा गर्भ की आग। (२) नौ प्रकार की भक्ति।

प्रेमी भक्त के ताप[1] पात[2] तीनौं नसैं।
अर्थ धर्म काम मोच्छ सकल ता में बसैं॥
जो राखै मन माहिं बिबेक बिचार कूं।
पावै पद निर्बान बचै जग भार सूं॥
कहैं गुरू सुकदेव मया के भाव सूं।
चरनहिं दासा होय सुनो बहु चाव सूं॥१॥

॥ राग सोरठ व गौरी व आसावरी ॥

साधो नवधा भक्ति करौ रे।
कलजुग में यह बड़ो पदारथ गहि गहि ताहि तरौ रे॥
जे जे या सूं भये सिरोमन तिन के नाम सुनाऊं।
बढ़ै कथा बिस्तार कहूं तो याते सूच्छम गाऊं॥
जन प्रहलाद तरो सुमिरन ते बन्दन सूं अक्रूर।
चरन कमल की सेवा सेती लछमी रहत हजूर॥
चन्दन चर्चत हूं प्रथु राजा उतरो भौजल पार।
बलि राजा तन अर्पन कीन्हो सदा रहै हरि द्वार॥
परम दास हनुमंत हुँ उबरो उत्तम पदवी पाई।
सखा सुभाव तरौ है अर्जुन ताकी महिमा गाई॥
मुक्त भयो है परीछित राजा सुन भागवत पुराना।
श्री सुकदेव मुनी से वक्ता हुए रूप भगवाना॥
जोग ज्ञान वैराग सवन सूं प्रेम प्रीति है न्यारी।
चरनदास ने गुरु किरपा सूं सांची बात बिचारी॥२॥

॥ दोहा ॥

नवो अंग के साध ते उपजै प्रेम अनूप।
रनजीता यों जानिये सब धर्मन का भूप॥३॥

---

(१) त्रैताप यानी मन का दुख, देह का दुख और बाहर का दुख लड़ाई झगड़ा वगैरह। (२) त्रैपातक यानी संचित, प्रारब्ध, और क्रियमान कर्म।

॥ अष्टपदी ॥

वह करै काग सूं हंसा । इक रहै पिया का संसा ॥
वह जात बरन कुल खोवै । अरु बीज बिरह का बोवै ॥
जो प्रेम तनिक चित आवै । वह औगुन सबै नसावै ॥
प्रेम लता जब लहरै । मन बिना जोग ही ठहरै ॥
कोइ चतुर खिलारी खेलै । वह प्रेम पियाला झेलै[1] ॥
जो धड़ पै सीस न राखै । सोइ प्रेम पियाला चाखै ॥
तन मन सूं जो बौराई । वह रहै ध्यान लौ लाई ॥
वह पहुँचै हरि के पासा । यों कहैं चरन ही दासा ॥४॥

—:o:—

॥ ज्ञान मति बर्णन ॥

प्रथम ज्ञान मार्ग के उपदेशी का निरूपन

गुप्त महा यह भेद हिये में राखिये ।
जो जड़ मूरख होय तासु नहिं भाखिये ॥१॥
हरि भक्त अरु गुरुमुखी तप करने की आस ।
सतसंगी सांचा यती ताहि देहु पद दास ॥२॥

॥ ब्रह्मज्ञान प्राप्ति का उपाय ॥

॥ अष्टपदी ॥

परबल इन्द्री जान सबन कूं बसि करै ।
सीत उस्न दुख सुख अस्तुति निन्दा हरै ॥
छोड़े ही हंकार बासना आस ही ।
अपने कारन बस्तु रखै नहिं पास ही ॥
पूरी राखै पैज[2] धारना धारि कै ।
गुरु आज्ञा गुरु सेव करै जु बिचारि कै ॥
सकल मनोरथ कामना करै छीन ही ।
ऐसे जिज्ञासू कूं द्वारे तीन ही ॥

(१) उसके नशे को बरदाश्त कर सकै । (२) टेक ।

एक जो द्वारा त्याग दुजा जो उपाव ही ।
तीज्ञा गुरु की निस्चय ऐसा सुभाव ही ॥
इन द्वारों में राह जो आगे की खुलै ।
लुटै थकै वह नाहिं सुखाला ही चलै ॥
जीवातम जो हंस कहावत है यही ।
याके हैं अस्थान जो तीनों ही सही ॥
जाग्रत स्वप्न सुषोपति परगट जानिये ।
तुरिया निज अस्थान गुप्त पहिचानिये ॥३॥

॥ दोहा ॥

दूध मध्य ज्यों घीव है मेहंदी माहीं रंग ।
जतन बिना निकसै नहीं चरनदास सो ढंग ॥४॥
जो जानै या भेद कू और करै परबेस ।
सो अबिनासी होत है छूटैं सकल कलेस ॥५॥

॥ अष्टपदी ॥

तन मथने को जतन कहूं अब जानिये ।
ज्यों निकसै तत सार बिलोवन ठानिये ॥
पहिले चक्कर जानि मूल द्वारे बिषै ।
जित ही पावँ की एड़ी सूं बंध दे रेखै ॥
मूल[1] चक्र सों खैंचि अपान चलाइये ॥
दूजे चक्कर पास जु आन फिराइये ॥
दहिनी ओर सों तीन लपेटे दीजिये ।
तीजे चक्कर माहिं गमन फिर कीजिये ॥
चौथे चक्कर माहिं पवन जो लाइये ।
वहुरौ पँचवें चक्र में जिव पहुँचाइये ॥
षष्टम चक्कर माहिं जु ताहि चढ़ाइये ।
सो त्रिकुटी के मध्य तहां ठहराइये ॥

(१) गुदा ।

रोके त्रिकुटी माहिं आनि कै बायु कूं।
षट चकर कूं छेदि चढ़ै जब धाय कूं॥
अपान बायु चढ़ि जाय वही अस्थान है।
प्रान बायु ह्वै जाय साधु कोइ जान है॥
रोकै प्रानहिं बायु तिरकुटी मध्यहीं।
करै ओं का ध्यान सीस में गद्य[1] हीं॥
यह तौ ऊंचा ध्यान जु अधिक अनूपहीं।
चरनहिं दासा होय जु ब्रह्म सरूपहीं॥

॥ दोहा ॥

नाम ब्रह्म का है नहीं है तो वह ओंकार।
जानै आपन को वहीं मैं हौं तत्व अपार॥७॥
जीव ब्रह्म यों होत है रहै न कछू लगाव।
चरनदास यों कहत हैं ऐसा किये उपाव॥८॥
जो जीवातम सो भया परमातम अरु ब्रह्म।
वा की सरवरि[2] को करै पाई परै न गम्म॥९॥

॥ चौपाई ॥

जब हो एक दूसरा नासै। बंध मुक्ति की रहै न सांसै॥
मृतक अवस्था जीवत आवै। करम रहित अस्थिर गति पावै॥
जब कोइ मितर बैरी नाहीं। पाप पुन्य की परै न छाहीं॥
हरि बिन और पिछान न कोई। तिन के इच्छा रही न दोई॥
ज्ञान दसा ऐसे करि गाई। चरनदास सुकदेव बताई॥१०॥

वाचक ज्ञानी

॥ चौपाई ॥

वाचक ज्ञानी बहुतक देखे। लच्छ ज्ञानी कोइ लेखे लेखे।
ज्ञानी बिगड़ै बिपई होई। कथै एक अरु चालै दोई॥
बुरे करम औगुन चित लावै। भले करम गुन सब बिसरावै॥

---

(१) अंतरंग। (२) बराबरी।

बिषय बासना के रंग रातो । झूठ कपट छल बल मद मातो ॥
इन्द्री बस मन हाथ न आवै । पाप करन सूं नाहिं डरावै ॥
ज्ञान कथै अरु बाद बढ़ावै । रहनि गहनि का भेद न पावै ॥
ब्रह्म बृत्ति का आवन भारी । चरनदास सुकदेव बिचारी ॥११॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान दसा आवन कठिन बिरला जानै कोय ।
ज्ञान दसा जब जानिये जीवत मिर्त्तक होय ॥१२॥

—०—

सुमिरन का अंग

॥ दोहा ॥

प्रनऊं श्री सुकदेव कूं बानी कहूँ अगाध ।
महिमा गाऊं नाम की सब मिलि सुनियो साध ॥१॥
ज्यों की त्योंही कहत हूँ कछू न राखूं भेद ।
निश्चै आवै नाम की छूटैं सब ही खेद ॥२॥
कइ बार जो जग करै जोग करै चित लाय ।
चरनदास कहैं नाम बिन सभी अफल हो जाय ॥३॥
आठ धात में गुन नहीं जो पारस के माहिं ।
तप तीरथ ब्रत साधना राम नाम सम नाहिं ॥४॥
ज्यों सेमर का सेवना ज्यों लोभी का धर्म ।
अन्न बिना भुस कूटना नाम बिना यों कर्म ॥५॥
छोड़ै सब ही बासना हो बैठै निष्काम ।
चरन कमल में चित धरै सुमिरै रामहिं राम ॥६॥
ऐसा हो जब साध हो तब रीझै करतार ।
दरसन दे अपना करै कभी न छोड़ै लार ॥७॥
चार वेद किये व्यास ने अर्थ विचार बिचार ।
तामें निकसी भक्तिही राम नाम तत सार ॥८॥
जिन कहिया सुकदेव कूं सुनिया प्रेम प्रतीत ।
तिन जग में परगट कियो जैसी चहिये रीत ॥९॥

ब्रह्म हत्या अरु नारि की बालक हत्या होय।
राम नाम जो मन बसै सब कूं डारै खोय ॥१०॥
ऐसा ही हरि नाम हीं मोहिं राम की सौंहि।
जाको होवै परख हीं सो समझैह्यां लौंहि ॥११॥
नामहिं ले जल पीजिये नामहिं लेकर खाह।
नामहिं लेकर बैठिये नामहिं ले चल राह ॥१२॥
जब लग जागै राम कहु तन मन सूं यहि चीत।
चरनदास यों कहत हैं हरि बिन और न मीत ॥१३॥
तेरा तौ कोइ है नहीं मात पिता सुत नार।
तातें सुमिरौ राम कूं हे मन बारम्बार ॥१४॥
जेहि कारन भटकत फिरै घर घर करत सलाम।
तेरे तौ वे हैं नहीं हे मन सुमिरौ राम ॥१५॥
जीवत ही स्वारथ लगे मूए देह जराय।
हे मन सुमिरौ राम कूं धोखे काहि पराय[1] ॥१६॥
हाथी घोड़े धन घना चंद्र मुखी बहु नारि।
नाम बिना जम लोक में पावै दुक्ख अपार ॥१७॥
जब लग जीवै राम कहु रामहि सेती नेह।
जीव मिलैगो राम में पड़ी रहैगी देह ॥१८॥
अचरज साधन नाम का भक्ति जोग का जीव।
जैसे दूध जमाय कै मथि करि काढ़ा घीव ॥१९॥

सुमिरन विधि

॥ दोहा ॥

पांच बरस जप नाभि सूं रग रग बोलै राम।
देह जीव निज भक्त ही पहुंचै हरि के धाम ॥२०॥
त्रिकुटी में जप राम कूं जहां उजाला होय।
स्वांसा माहीं जपे ते दुविधा रहै न कोय ॥२१॥

(१) पड़ा है।

गगन मंडल में जाप करि जित है दसवां द्वार।
चरनदास यों कहत हैं सो पहुचै हरिद्वार ॥२२॥
नाग उठाकर नाभि सूं गगन माहिं ले जाय।
जहां होय परकास हीं सुकदेव दिया बताय ॥२३॥
मन हीं मन में जाप करि दरपन उज्जल होय।
दरसन होवै राम का तिमिर जायं सब खोय ॥२४॥
सुरत माहिं जो जप करै तन सूं न्यारा जौन।
मिलै सच्चिदानंद में गहे रहै जो मौन ॥२५॥
सकल सिरोमनि नाम है सब धरमन के माहिं।
अनन्य भक्त वह जानिये सुमिरन भूलै नाहिं ॥२६॥
आनि धरम मानै नहीं आनि देव नहिं ध्यान।
ऐसे भक्त अनन्य को कोई पावै जान ॥२७॥
राम नाम मुख सूं कहौ राम नाम सुनि कान।
रोम रोम हरि को रटौ ऐसी गहिये बान[1] ॥२८॥
बिद्या माहीं बाद है तप के माहीं ऋद्धि।
राम नाम में मुक्ति है जोग माहिं यों सिद्धि ॥२९॥
राम नाम में ये सबै रिद्धि सिद्धि औ मोछ।
ऐसा इष्ट संभारिये चरनदास कहि सोछ[2] ॥३०॥
जाका कीया सब बना सात दीप नौ खंड।
चरनदास यों कहत हैं तीन लोक ब्रह्मंड ॥३१॥
तो[3] कारन सब कुछ किया नाना बिधि सुख दीन्ह।
तैं वाकूं जाना नहीं नाम न कबहूं लीन्ह ॥३२॥
अबके औसर फिर बन्यो पाई मानुख देहि।
चरनदास यों कहत हैं राम नाम ही लेहि ॥३३॥

---

(१) आदत। (२) विचार के। (३) तेरे।

पतिव्रता का अंग

॥ दोहा ॥

पतिव्रता वहि जानिये आज्ञा करै न भंग।
पिय अपने के रंग रतै और न सोहैं[1] ढंग ॥१॥
अपने पिय कूं सेइये आन[2] पुरुस तजि देह।
पर घर नेह निवारिये रहिये अपने गेह ॥२॥
अज्ञाकारी पीव की रहैं पिया के संग।
तन मन सूं सेवा करै और न दूजो रंग ॥३॥
रंग होय तौ पीव को आन पुरुष बिषरूप।
छांह बुरी पर घरन की अपनी भली जुधूप ॥४॥
अपने घर का दुख भला पर घर का सुख छार[3]।
ऐसे जानै कुल बधू सो सतवंती[4] नार ॥५॥
पति की ओर निहारिये औरन सूं क्या काम।
सबै देवता छोड़ि कै जपिये हरि का नाम ॥६॥
खसम तुम्हारो राम है इत उत रुख मत मारि।
चरनदास यों कहत हैं यही धारना धारि ॥७॥
यह सिर नवै तो राम कूं नाहीं गिरियो टूट।
आन देव नहिं परसिये यह तन जावो छूट ॥८॥
पतिव्रता कूं ब्रत गहो बिभिचारिन अंग टार।
पति पावै सब दुख नसैं पावै सुक्ख अपार ॥९॥
जब तू जानै पीव हीं वह अपनो करि लेहि।
परम धाम में राखि कर बांह पकरि सुख देहि ॥१०॥
यही सिखापन देत हूं धारो हिरदय माहिं।
ऐसा पौधा बोइयो ताकी बैठै छाहिं ॥११॥
सतवादी सत सूं रहो सत हीं मुख सूं बोल।
एक ओर हरि नाम रख एक ओर जग तोल ॥१२॥

---

(१) नहीं अच्छा लगता। (२) दूसरा। (३) धूल, राख। (४) पतिव्रता।

॥ राग मंगल ॥

सोई सोहागिल नारि पिया मन भावई ।
अपने घर को छोड़ि न पर घर जावई ॥
अपने पिय का भेद न काहू दीजिये ।
तन मन सुरति लगाय के सेवा कीजिये ॥
पति की अज्ञा चाल पाल पिय को कहो ।
लाज लिये कुलवंत जतन हीं सूं रहो ॥
धनि धनि है जग माहिं पुरुष बहु हित धरै ।
सब सूं नायक[1] होय जो सिर बर[2] को करै ॥
पिय कूं चाहो रूप सिँगार बनाइये ।
पतिव्रता कुल दोय में सोभा पाइये ॥
नौधा बस्तर पहिरि दया रंग लाल है ।
भूखन बस्तर धारि बिचित्तर बाल है ॥
रंग महल निर्दोष व्हाँ झिलमिल नूर है ।
निरगुन सेज बिछाय सभी करि दूर भय ॥
मंदिर दीपक बाल बिन बाती घीव की ।
सुघर चतुर गुन रासि लाड़िली पीव की ॥
कहैं गुरू सुकदेव यों बालम मोहिये ।
चरनदास ले सीख जो प्रेम समोइये ॥१३॥

॥ राग सोरठ ॥

तू सदा सोहागिन नारी है ।
पिय के संग मिली मद पीवै ताते लागत प्यारी है ॥
भंवर गुफा में भंवर वनायो बिन घृत जोती जारी है ।
सुखमन सेज महा सुखदाई भोगत भोग दुलारी है ॥
स कियो कंता चलै न पंथा टोना डारो भारी है ।
पहर तुम्हरे रंग राचो हमको मिलै न बारी है ॥

(१) बड़ा । (२) पति ।

पति मन मानी सो पटरानी सोई रूप उजारी है।
हम चारौ जो सौति तुम्हारी तुम गुन आगे हारी है॥
चरनहिं दास भई तोहिं सेवै लगी रहै नित लारी है।
सुकदेवा सिर छत्र हमारो सो बस भयो तुम्हारी है॥

—:०:—

अनहद शब्द की महिमा और उसकी प्राप्ती का बिलास।

शब्द १

॥ अष्टपदी ॥

अनहद शब्द अपार दूर सूं दूर है।
चेतन निर्मल शुद्ध देह भरपूर है॥ १ ॥
निःअच्छर है ताहि और निःकर्म है।
परमातम तेहि मानि वही परब्रह्म है॥ २ ॥
याके कीने ध्यान होत है ब्रह्म हीं।
थारै तेज अपार जाहि सब भर्म हीं॥ ३ ॥
वा पटतर[1] कोइ नाहिं जो यों हीं जानिये।
चांद सूर्य्य अरु सृष्टि के माहिं पिछानिये॥ ४ ॥
याको छोड़ै नाहिं सदा रहै लीन हीं।
यही जो अनहद सार जानि परवीन हीं॥ ५ ॥
यों जिव आतम जान जो अनहद लीन हो।
सो परमातम होय जीवता जाय खो॥ ६ ॥
ध्यानी को मन लीन होय अनहद सुनै।
आप अनाहद होय बासना सब भुनै॥ ७ ॥
पाप पुन्य छुटि जायं दोऊ फल ना रहैं।
होय परम कल्यान जो तिरगुन[2] ना गहैं॥ ८ ॥

---

(१) बराबर। (२) सत रज तम अर्थात् ब्रह्मा विष्णु महेश।

शब्द २

॥ दोहा ॥

करते अनहद ध्यान के ब्रह्म रूप हो जाय।
चरनदास यों कहत हैं बाधा सब मिटि जाय ॥१॥
गगन मध्य जो कंवल है बाजत अनहद तूर।
दल हजार को कमल है पहुंचै गुरु मत सूर ॥२॥
गगन मंडल के कमल में सतगुरु ध्यान निहार।
चरनदास सुकदेव परस के मेटै सकल बिकार ॥३॥

शब्द ३

॥ छप्पै ॥

नौ नाड़ी को खैंचि पवन लै उर में दीजै।
बज्जर ताला लाय द्वार नौ बंद करीजै ॥१॥
तीनों बंद लगाय अस्थिर अनहद आराधै।
सुरति निरति का काम राह चल गगन अगाधै ॥२॥
सुन्न सिखर चढ़ि रहै दृढ़ जहां आसन करै।
भन[1] चरनदास ताड़ी लगै सो राम दरस कलिमल हरै ॥३॥

शब्द ४

॥ छप्पै ॥

मूल कमल में खेलि पिया को देखन चलिये।
उलटि वेधि खट चक्र जाइ सतवें से मिलिये ॥१॥
प्रान अपान मिलाइ राह पच्छिम की लीजै।
वंक नाल कूं सोध प्रान लै ता में दीजै ॥ २ ॥
मेरु दंड चढ़ि जाय जब लोक लोक की गम परै।
भन[1] चरनदास ब्रह्मंड में ब्रह्म दरसी दरसन करै ॥३॥

(१) कहै।

शब्द ५

॥ छप्पै ॥

दल असंख को कमल रूप जहं सत्त बिराजै ।
अनंत भानु परकास जहां अनहद धुनि गाजै ॥१॥
सुन्दर छबि अति हंस संत जन आगे ठाढ़े ।
जहं पहुंचे कोइ सूर बीर नीसान जो गाड़े ॥ २ ॥
कमल मध्य जो तख्त है सोभ अपार बरनूं कहा ।
कहैं चरनदास उस तख्त पर आदि पुरुस अद्भुत महा ॥३॥

शब्द ६

॥ छप्पै ॥

छत्र फिरत नित रहत चंवर ढोरत जहं हंसा ।
जहं दरसन करै सिष्य मिटै जुग जुग का संसा ॥१॥
आवा गमन है रहित मरन जीवन नहिं होई ।
आनि मिलै जब चारि मुक्त कहियत हैं सोई ॥२॥
जहं अमर लोक लीला अमर फल अनेक तहं पावई ।
भन[1] चरनदास सुकदेव बल चौथा पद इमि गावई ॥३॥

शब्द ७

॥ छप्पै ॥

जहां चंद नहिं सूर जहां नहिं जगमग तारे ।
जहां नहीं त्रैदेव त्रिगुन माया नहिं लारे ॥१॥
जहां वेद नहिं भेद जहां नहिं जोग जज्ञ तप ।
जहां पवन नहिं धरनी अगिन नहिं जहां गगन अप[2] ॥२॥
जहां रात नहिं दिवस है पाप पुन्य नहिं व्यापई ।
आदि अंत अरु मध्य है कहैं चरनदास ब्रह्म आप ही ॥३॥

शब्द ८

॥ छप्पै ॥

जहां काल नहिं ज्वाल भर्म नहिं तिमिर उजारा ।
जहां राग नहिं द्वेस जहां नहिं कर्म अचारा ॥१॥

(१) कहैं । (२) पानी ।

जहां काम नहिं क्रोध लोभ नहिं मोह नरेसा ।
जहां मित्र नहिं सत्रु जहां नहिं देस बिदेसा ॥२॥
चरनदास इक ब्रह्म है और न दूजो कोइ तहां ।
भया जीव सूं ब्रह्म जब जोग जुक्ति पहुँचे जहां ॥३॥

शब्द ६

॥ छप्पै ॥

जहां आतम देव अभेव सेव कबहूँ न करावै ।
इच्छा दुई न द्रोह कर्म नहिं भर्म सतावै ॥१॥
जहँ जाप ताप नहिं आप तहां नहिं रूप न रेखा ।
जासु जाति नहिं पांति नारि नहिं पुरुस बिसेखा ॥२॥
पार ब्रह्म पूरन सदा है अखंड नहिं खंडिता ।
भन चरनदास ताड़ी लगै सो सुन्न सिखर में मंडिता ॥३॥

शब्द १०

॥ दोहा ॥

मन पवना बस कीजिये ज्ञान जुक्ति सूं रोक ।
सुरति बांधि भीतर धसै सूझै काया लोक ॥१॥
चरनदास यहि बिधि कही चढ़िबे कूं आकास ।
सोध साधि साधन अगम पूरन ब्रह्म बिलास ॥२॥

शब्द ११

॥ राग सोरठ व आसावरी ॥

सतगुरु निज पुर धाम बसाये ।
जित के गये अमर ह्वै बैठे भवजल बहुरि न आये ॥१॥
जोगी जोग जुक्ति करि हारे ध्यानी ध्यान लगावै ।
हरि जन गुरु की दया बिना यों दृष्टि नहीं दरसावै ॥२॥
पंडित मुंडित चुंडित ढूँढ़ैं पढ़ि सुनि बेद पुरानै ।
जा सूं वे सब पायो चाहैं सो तौ नेति बखानै ॥३॥

सुरति निरति की गम जहं नाहीं वै कहो कैसे पावैं ॥४॥
देस अटपटा बेगम[1] नगरी निगुरे राह न पाया।
चरनदास सुकदेव गुरू ने किरपा करि पहुँचाया ॥५॥

शब्द १२

॥ राग सोरठ व नट व बिलावल ॥

सो नैना मोरे तुरिया तत पद अटके।
सुरति निरति की गम नहिं सजनी जहां मिलन को लटके॥१॥
भूलो जगत बकत कछु औरै बेद पुरानन ठठके।
प्रीत रीति की सार न जानै डोलत भटके भटके ॥२॥
किरिया कर्म भर्म उरझे रे ये माया के झटके।
ज्ञान ध्यान दोउ पहुँचत नाहीं राम रहीमा फटके ॥३॥
जग कुल रीति लोक मर्यादा मानत नाहीं हटके।
चरनदास सुकदेव दया सूं त्रैगुन तजि के सटके ॥४॥

शब्द १३

॥ राग करखा ॥

पिंड ब्रह्मंड की सैल गुरु गम करी।
सरसिया जुक्ति सूं अलख राई।
सहज ही सहज पग धरा जब अगम को।
दसो परकार झागड़[2] बजाई ॥१॥
खोलि कपाट अरु बज्र द्वारे चढ़ो।
कला के भेद कुंजी लगाई।
पहिले महल पर जाय आसन किया।
दूसरे महल की खबर पाई ॥२॥
तीसरे महल पर सुरति जा बस रही।
महल चौथे दुही अमी गाई[3] ॥
पांचवें महल को साध कोइ पाई है।
महल छटवां दिया गुरु बताइ ॥३॥

(१) अगम। (२) बाजा। (३) गाय।

सातवें महल पर कोटि सूरज दिपैं ।
आठवें महल अवगति गोसाईं ॥
रूप अद्भुत तहां देखि अचरज जहां ।
देखिया दरस तब बिपति जाई ॥४॥
सुकदेव की सहा सों धारना गहा सो ।
आपने पीव के भवन आई ॥
चरनदास आपा दिया प्रेम प्याला पिया ।
सीस सदके किया पूजि पाईं ॥५॥

शब्द १४

॥ राग जैजैवन्ती ॥

ऐसी जो जुगत जानै सोई जोगी न्यारा ॥ टेक ॥
आसन जो सिद्ध करै त्रिकुटी में ध्यान धरै ।
बिना तेल दिया बरै जोति हूँ उजारा ॥१॥
संजम संभाल साधै मूल द्वार बंद बांधै ।
संखिनी उलटि साधै कामदेव जारा ॥२॥
प्रान बायु हिये माहीं खैंचि कै अपान लाहीं ।
दोऊ नीके मिलि जाहीं ऐसा खेल धारा ॥३॥
कुम्भक अथक राखै अनहद की ओर ताकै ।
सुखमन पैठि नाकै आगे जो बिचारा ॥४॥
खोलि कै कपाट सिरा कोऊ चढ़ै सूर बीरा ।
काम धेनु जावै तीरा अमी को उतारा ॥५॥
उन्मुनी जाय लागै निज ग्रह माहिं जागै ।
जनम मरन भागै छूटै जम भारा ॥६॥
गुरु सुकदेव कहें करनी यहि बिधि लहै ।
चरनदास होय रहै आप को संभारा ॥७॥

बिनती और प्रार्थना

शब्द १

॥ राग मलार ॥

सतगुरु भौसागर डर भारी ।
काम क्रोध मद लोभ भंवर जित लरजत नाव हमारी ॥१॥
त्रिस्ना लहर उठत दिन राती लागत अति झकझोरा ।
ममता पवन अधिक डरपावै कांपत है मन मोरा ॥२॥
और महा डर नाना बिधि के छिन छिन में दुख पाऊं ।
अन्तर जामी बिनती सुनिये यह मैं अरज सुनाऊं ॥३॥
गुरु सुकदेव सहाय करो अब धीरज रहा न कोई ।
चरनदास को पार उतारो सरन तुम्हारी सोई ॥४॥

शब्द २

॥ राग रामकली ॥

पतित उधारन बिरद[1] तुम्हारो
जो यह बात सांच है हरि जू, तौ तुम हम कूं पार उतारो ॥१॥
बालपने औ तरुन अवस्था, और बुढ़ापे माहीं ।
हम से भई सभी तुम जानो, तुम से नेक छिपानी नाहीं ॥२॥
अनगिन पाप भये मन माने, नखसिख औगुन धारी ।
हिरि फिरि कै तुम सरनै आयो, अब तुम को है लाज हमारी ॥३॥
सुभ करमन को मारग छूटो, आलस निद्रा घेरो ।
एकहिं बात भली बन आई, जग में कहायो तेरो चेरो ॥४॥
दीनदयाल कृपाल बिसंभर, श्री सुकदेव गोसाईं ।
जैसे और पतित घन तारे, चरनदास की गहियो बांहीं ॥५॥

(१) कीर्ति ।

शब्द ३

॥ राग रामकली ॥

अर्ज सुनो जगदीस गोसाईं ।
ग्रह नछत्र अरु देव बिसार्‌यो, चरन कंवल की आयो छाहीं ॥१।
सत बिस्वास यही हिये धार्‌यो, तोहिं न भूलूं एक घरी ।
इत उत सूं मन खेंच लियो है, काहू से कछु नाहिं सरी ॥२।
अब चाहो सो करो प्रभु तुमहीं, द्वारे तुम्हरे सुरति अरी ।
भावै नर्क स्वर्ग पहुंचावो, भावै राखौ निकट हरी ॥३।
अपनी चाह रही नहिं कोई, जब सूं तुम्हरी आस धरी ।
आनि भरोसो छांड़ दियो है, सकल बिकल[1] सब छार करी ॥४
यह आपा तुमहीं कूं दीन्ही, मेरी मो में कुछ न रही ।
आदि पुरुस सुकदेव सुनो जी, चरन दास यों टेर कही ॥५

शब्द ४

॥ राग धनाश्री ॥

अब तुम करो सहाय हमारी ।
मन के रोग होय गये दीरघ तन के बड़े बिकारी ॥१
तुम सों बैद और को दूसर जाहि दिखाऊं नारी[2] ।
सजीवन मूल अमर हो जासों सो है दया तुम्हारी ॥२।
क्रिया कर्म की औषधि जेती रोग बढ़ावन हारी ।
दीजे चूरन ज्ञान भक्ति को मेटो सकल बिथा री ॥३।
जन के काज पियादे धावत चरन कंवल पर वारी ।
मैं भयो दास अधीन तुम्हारो मेरी करो संभारी ॥४।
जो मोहिं कुटिल कुचालि जानि कै मेरी सुरति बिसारी ।
चरनदास है सुकदेव तेरो दुष्ट हंसैंगे भारी ॥५..

(१) कष्ट । (२) नाड़ी, नब्ज ।

शब्द ५

॥ राग केदारा ॥

अब की तारि देव बल बीर ।
चूक मो सूं परी भारी कुबुधि के संग सीर[1] ॥१॥
भौ सागर की धार तीच्छन महा गंधीलो[2] नीर ।
काम क्रोध मद लोभ भंवर में चित न धरत अब धीर ॥२॥
मच्छ जहं बलवंत पांचौ थाह गहिर गँभीर ।
मोह पवन झकोर दारुन दूर पैलव[3] तीर ॥३॥
नाव तौ मंझ धार भरमी हिये बाढ़ी पीर ।
चरनदास कोइ नाहिं संगी तुम बिना हरि हीर[4] ॥४॥

शब्द ६

॥ राग बिलावल ॥

प्रभु जू सरन तिहारी आयो ।
जो कोइ सरन तिहारी नाहीं भरम भरम दुख पायो ॥१॥
औरन के मन देवी देवा मेरे मन तुहि भायो ।
जब सों सुरति सम्हारी जग में और न सीस नवायो ॥२॥
नरपति सुरपति आस तुम्हारी यह सुनि कै मैं धायो ।
तीरथ बरत सकल फल त्याग्यो चरन कमल चित लायो ॥३॥
नारद मुनि अरु सिव ब्रह्मादिक तेरो ध्यान लगायो ।
आदि अनादि जुगादि तेरो जस वेद पुरानन गायो ॥४॥
अब क्यों न बांह गहो हरि मेरी तुम काहे बिसरायो ।
चरनदास कहैं करता तूही गुरु सुकदेव बतायो ॥५॥

शब्द ७

॥ राग सोरठ ॥

अब जग फंद छोड़ावो जी हूँ चरन कंवल को चेरो ।
पड़ो रहूँ दरबार तिहारे संतन माहिं बसेरो ॥१॥

(१) खेती । (२) बदबूदार । (३) फ़ासला । (४) सार ।

बिना कामना करूं चाकरी आठों पहरे नेरो।
मनसब[१] भक्ति कृपा करि दीजै यही मोहिं बहुतेरो ॥२॥
खानेजाद कदीमी[२] कहियो तुही आसरो मेरो।
झिड़क बिडारो तहूं न छोड़ूं सेवा सुमिरन तेरो ॥३॥
काहू ओर आन देवन सूं रहो नहीं उरझेरो।
जैसे राखो त्योंहीं रह हूँ करि लीजै सुरझेरो ॥४॥
तेरे घर बिन कहूँ न मेरो ठौर ठिकानो डेरो।
मोसे पतित दीन कूं हरि जू तुम हीं करो निबेरो ॥५॥
गुरु सुकदेव दया करि मोको ओर तिहारी फेरो।
चरनदास को सरनै राखौ यही इनाम घनेरो[३] ॥६॥

शब्द ८

॥ राग बिलावल ॥

तुम साहब करतार हो हम बंदे तेरे।
रोम रोम गुनेगार हैं बखसो हरि मेरे ॥१॥
दसौ दुवारे मैल है सब गंदम गंदा।
उत्तम तेरो नाम है बिसरै सो अंधा ॥२॥
गुन तजिकै औगुन कियो तुम सब पहिचानो।
तुम सूं कहा छिपाइये हरि घट की जानो ॥३॥
रहम करो रहमान सूं यह दास तिहारो।
भक्ति पदारथ दीजिये आवा गवन निवारो ॥४॥
गुरु सुकदेव उबारि लो अब मेहर करीजै।
चरनहिं दास गरीब कूं अपनो करि लीजै ॥५॥

शब्द ९

॥ राग काफी ॥

तुव गुन करूं बखान यह मेरि बुद्धि कहां है ॥ टेक ॥
चतुर मुखी ब्रह्मा गुन गावैं तिनहुं न पायो जान ॥१॥
गुन गावत संकर जब हारे करने लागे ध्यान ॥२॥

(१) दर्जा। (२) पुराना गुलाम। (३) बहुत।

गुन अपार कछु पार न पायो सनकादिक कथि ज्ञान ॥३॥
गुन गावत नारद मुनि थाके सहस मुखन सूं सेस ॥४॥
लीला को कछु वार न पायो ना परिमान न भेस ॥५॥
सक्ति घनी अनगिनित तुम्हारी बहुत रूप बहु नावं ॥६॥
जबहि बिचारूं हिये में हारूं अचरज हेरि हिरावं ॥७॥
अति अथाह कछु थाह न पाऊँ सोच अचक रहि जावं ॥८॥
गुरु सुकदेव थके रनजीता मैं कहु कौन कहावं[1] ॥९॥

शब्द १०

॥ राग बिहाग ॥

राखो जी लाज गरीब निवाज ।
तुम बिन हमरे कौन संवांरै सबहीं बिगरैं काज ॥१॥
भक्तबछल हरि नाम कहावो पतित उधारनहार ।
करो मनोरथ पूरन जन को सीतल दृष्टि निहार ॥२॥
तुम जहाज मैं काग तिहारो तुम तजि अंत न जाउं ।
जो तुम हरि जू मारि निकासो और ठौर नहिं पाउं ॥३॥
चरनदास प्रभु सरन तिहारी जानत सब संसार ।
मेरी हँसी सो हँसी तुम्हारी तुम हूँ देखु बिचार ॥४॥

शब्द ११

॥ राग सोरठ ॥

मो कूं कछु न चहिये राम ।
तुम बिन सबहीं फीके लागैं, नाना सुख धन धाम ॥१॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि आपनी । और जनन को दिजै ॥
मैं तो चेरो जन्म जन्म को । निज करि अपनो कीजै ॥२॥
स्वर्ग फलन की मोहिं न आसा । ना बैकुंठ न मोच्छहिं चाहूँ ॥
चरन कमल के राखो पासा । यहि उर माहिं उमाहूँ ॥३॥
भक्ति न छोड़ूं मुक्ति न मांगूं । सुन सुकदेव मुरारी ॥
चरनदास की यही टेक है । तजूं न गैल तुम्हारी ॥४॥

---

(१) मैं कौन गिनती में हूँ ।

शब्द १२

॥ राग कल्यान ॥

सतगुरु पांचो भूत उतारो ।
जनम जनम के लागेहिं आये । दे मंतर अब तिन्हैं बिडारो ॥१
काम क्रोध मोह लोभ गर्ब ने । मन बौराय कियो अपभायो[1]
जिनके हाथ परो जिव मेरो । घेरा घेरि बहुत दुख पायो ॥२
एक घरी मोहिं छोड़त नाहीं । लहरि चढ़ाय कै बहुत निवायो[2]
कपि ज्यों घर घर द्वार नचावै । उत्तम हरि को नाम छुटायो ॥३
अब की सरन गही है तुम्हरी । चरनहिंदास अजाने[3] ॥
किरपा करि यह ब्याधि छुटाबो । गुरु सुकदेव सयाने ॥४

शब्द १३

॥ राग सोरठ ॥

गुरुदेव हमारे आवो जी ।
बहुत दिनों से लगो उमाहो[4] । आनंद लावो जी ॥१
पलकन पंथ बुहारूँ तेरो । नैन परे पग धारो जी ॥
बाट तिहारी निस दिन देखूं । हमरी ओर निहारो जी ॥२
करूं उछाह[5] बहुत मन सेती । आंगन चौक पुराऊं जी ॥
करूं आरती तन मन वारूं । बार बार बलि जाऊंजी ॥३
दै पैकरमा सीस नवाऊं । सुनि सुनि बचन अघाऊं जी ॥
गुरु सुकदेव चरन हूँ दासा । दरसन माहिं समाऊं जी ॥४

करम भरम का निषेध

शब्द १

॥ राग जैजैवती ॥

रु विन ज्ञान नाहिं तिमिर नसावै ॥टेक॥
ाई भरमत फिरें लोई जल और पाहन सेई ।
ात नहीं बूझै कोई तिन को वह ध्यावै ॥१॥

(१) मनमानी । (२) नीचा दिखलाया । (३) नादान । (४) उमंग, लालसा । (५) उत्साह ।

देवी और देव पूजै जहँ कछु नाहिं सूझै।
फेरि फेरि जावै दूजे तहां नहीं पावै ॥२॥
वैदिक को भेद ठानै ज्योतिष बिचार जानै।
काहू की कही नाहिं मानै करै मन भावै ॥३॥
भूत टोना जादू सेवै प्रभु को न नाम लेवै।
गुरु भक्ती में न चित देवै गुन नाहिं गावै ॥ ४ ॥
श्री सुकदेव कहैं चरन दास होय रहैं।
सोई मुक्ति धाम लहै आपा जो उठावै ॥ ५ ॥

शब्द २

॥ होरी राग धनाश्री ॥

साधो घूंघट भर्म उठाय होली खेलिये ॥ टेक ॥
बेद पुरान लाज तजिबे री इन में ना उरझैये ॥१॥
सिर सूं सकुच उतारि चदरिया पिय सूं रंग बढ़ैये ॥२॥
रूप न रेख है सूरति मूरति ता के बलि बलि जैये ॥३॥
अचल अजर अबिनासी सोई सनमुख दरसन पैये ॥४॥
सत चेतन आनंद सदा हीं निरभय ताल बजैये ॥५॥
पाप पुन्य की संका त्यागो जहँ मर्जाद न पैये ॥६॥
ओला नीर बिचारो जैसे यौं आपा बिसरैये ॥७॥
चरनदास बासना तजि कै सागर बुंद समैये ॥८॥

शब्द ३

॥ राग बिलास ॥

घट में तीरथ क्यों न नहावो ॥टेक॥
इत उत डोलो पथिक बने हीं। भरमि भरमि क्यों जन्म गंवावो ॥१॥
गोमती कर्म सुकारथ कीजे। अधरम मैल छुटावो ॥२॥
सील सरोवर हित करि न्हैये। काम अगिन की तपन बुझावो ॥३॥
रेवा[1] सोई छिमा को जानो। तामें गोता लीजे ॥४॥
तन में क्रोध रहन नहिं पावै। ऐसी पूजा चित दै कीजे ॥५॥

---

(१) नर्बदा नदी।

सत जमुना संतोष सरस्वति । गंगा धीरज धारो ॥६॥
झूंठ पटकि निर्लोभ होय करि । सब हीं बोझा सिर सूं डारो ॥७॥
दया तीर्थ कर्मनासा कहिये । परसै बदला जावै ॥८॥
चरनदास सुकदेव कहत हैं । चौरासी में फिर नहिं आवै ॥९॥

शब्द ४

॥ राग बिलास ॥

घट में तीरथ यों तुम न्हावो ॥ टेक ॥
ता के न्हान अमर पद पहुँचो । आदि-पुरुष निस्चै करि पावो ॥१॥
कासी सो तत करनी कीजे । कलिमल सकल नसावो ॥२॥
रहनि गहनि पुष्कर करि जानो । यामें मज्जन[1] क्यों न करावो ॥३॥
ध्यान द्वारिका दृढ़ करि परसो । हित की छाप लगावो ॥४॥
इन्द्रीजित सोइ बद्रीनाथा । सत करि चित में लावो ॥५॥
भंवरगुफा में है तिर्बेनी । सुरति निरति लै धावो ॥६॥
जोग जुक्ति सूं चुबकी[2] लेकरि । काग पलटि हंसा होई जावो ॥७॥
तन मथुरा अरु मन बिन्द्राबन । ता में रास रचावो ॥८॥
हिरदे कंवल खिले परकासा । दरसन देखि अधिक हुलसावो ॥९॥
गुरु चरनन में सबहीं तीरथ । सिमटि सिमटि तहं आवो ॥१०॥
चरनदास सुकदेव कहत हैं । अपनो मस्तक भेंट चढ़ावो ॥११॥

शब्द ५

॥ होरी राग धमार ॥

साधो चलो तुम संभारी जग होरी मचि रहि भारी ॥ टेक ॥
दंभ पखंड गहे कर में डफ हूबड़ हूबड़[3] की तारी ।
त्रैगुन तार तंबूरा साजे आसा तृस्ना गति धारी ॥१॥
पाप पुन्य दोउ ले पिचुकारी छोड़त हैं बारी बारी ।
सनमुख ह्वै करि जो नर खेलो ताके चोट लगी कारी ॥२॥

(१) स्नान । (२) गोता । (३) ताली बजाने की आवाज का धुन्यात्मक शब्द ।

लोभ मोह अभिमान भरो लै माया गागरि डारी ।
राजा परजा जोगी तपसी भींज रहे संसारी ॥३॥
कुबुधि गुलाल डारि मुख मींजो काम कला पुटली मारी ।
जुग जुग खेलत यौं चलि आई काहू ते नाहीं हारी ॥४॥
जड़ चेतन दोउ रूप संवारे एक कनक दूजी नारी ।
पांच पचीस लिये संग अबला हँसि हँसि मिल गावत गारी ॥५॥
चतुरा फगुवा दै दै छूटे मूरख को लागी प्यारी ।
चरनदास सुकदेव बतावैं निर्गुन ज्ञान गली न्यारी ॥६॥

शब्द ६

॥ राग बिलावल ॥

घट में खेलि ले मन खेला ॥ टेक ॥
सकल पदारथ घट ही माहीं हरि सूँ होय जो मेला ॥१॥
घट में देवल घट में जोती घट में तीरथ सारे ॥२॥
बेगहिं आव उलट घट माहीं बीते[1] परबी[2] न्हारे ॥३॥
घट में भरो है मान सरोवर मोती चुगै मराला[3] ॥४॥
घट में ऊँचा ध्यान शब्द का सोहं सोहं माला ॥५॥
घट में बिन सूरज उजियारा राति दिना तहिं सूझै ॥६॥
अमृत भोजन भोग लगतु है बिरला जन कोइ बूझै ॥७॥
घट में पापी घट में धर्मी घट में तपसी जोगी ॥८॥
गुन औगुन सब घट ही माहीं-घट में बैद अरु रोगी ॥९॥
राम भक्ति घट ही में उपजै घट में प्रेम प्रकासा ॥१०॥
सुकदेव कहैं चौथा पद घट में पहुंच चरन हीं दासा ॥११॥

शब्द ७

॥ राग सोरठ व बिलावल ॥

जो नर इत के भये न उत के ॥टेक॥
उत को प्रेम भक्ति नहिं उपजी । इत नहिं नारी सुत के ॥१॥
घर सूं निकसि कहा उन कीन्हा । घर घर भिच्छा मांगी ॥२॥

(१) बीतती है । (२) परब का दिन । (३) हंस ।

बाना सिंह चाल भेड़न की। साध भये अकि[1] स्वांगी ॥३॥
तन मूड़ा पै मन नहिं मूड़ा। अनहद चित्त न दीन्हा ॥४॥
इन्द्री स्वाद मिले बिषयन सूं। बक बक बक बक कीन्हा ॥५॥
माला कर में सुरति न हरि में। यह सुमरिन कहु कैसा ॥६॥
बाहर भेख धारि के बैठे। अंतर पैसा पैसा ॥७॥
हिंसा अकस कुबुधि नहिं छोड़ी। हिरदै सांच न आया ॥८॥
चरनदास सुकदेव कहत हैं, बाना पहिरि लजाया ॥९॥

शब्द ८

॥ राग गौरी ॥

सब जग भर्म भुलाना ऐसे।
ऊंट कि पूंछ से ऊंट बंध्यो ज्यों भेड़ चाल है जैसे ॥टेक॥
खर[2] का सोर[3] भूंस[4] कूकर[5] की देखा देखी चाली।
तैंसे कलुआ[6] जाहिर भैरों[6] सेढ़[6] मसानी[6] काली[6] ॥१॥
गांव भूमिया हित करि धावें, जाय बटोही दौरै।
सद्दो[7] सरवर इष्ट धरत हैं, लोग लोगाई बौरे ॥२॥
राखें भाव स्वान[5] गर्धभ को, उनको लाय जिमावैं[8]।
ठेठ चमारन को सिर नावैं, ऊंची जाति कहावैं ॥३॥
दूध पूत पाथर से मांगें, जाके मुख नहिं नासा।
लपसी पपड़ी ढेर करत हैं, वह नहिं खावै मासा[9] ॥४॥
चाके आगे बकरा मारैं, ताहि न हत्या जाने।
लै लोहू माथे सों लावैं, ऐसे मूढ़ अयाने ॥५॥
कहैं कि हमरे बालक जावै,[10] बड़ी अयुर्बल[11] दीजै।
उनके आगे विन्ती करते, अंसुवन हिरदा भीजै ॥६॥

---

(१) या कि। (२) गदहा। (३) रेंकना। (४) भूँकना। (५) कुत्ता। (६) बनाये हुए देवी और देवता। (७) शेख सद्दो। (८) खिलाते हैं। (९) माशा भर। (१०) जनमै। (११) उमर।

भोये भटरे[1] के पग लागैं, साधु संत की निंदा।
चेतन को तजि पाहन[2] पूजैं, ऐसा यह जग अंधा ॥७॥
सत संगति की ओर न झांकैं, भक्ति करत सकुचावैं।
चरन दास सुकदेव कहत हैं, क्यों न नरक को जावैं ॥८॥

शब्द ९

॥ राग गौरी ॥

अरे नर क्या भूतन की सेवा।
दृष्टि न आवै मुख नहिं बोलै ना लेवा ना देवा ॥टेक॥
जेहिं कारन घी जोति जलावै, बहु पकवान बनावै।
सो खर्चै तू अधिक चाव सूं, वह सुपने नहिं खावै ॥१॥
राति जगावैं भोपा[3] गावैं झूठै मूंड़ हिलावैं।
कुटुंब सहित तोहिं पैर पड़ावैं, मिथ्या बचन सुनावैं ॥२॥
ताहि भरोसे जन्म गंवावैं, जीवत मरत न साथा।
बड़ भागन नर देही पाई, खोवैं अपने हाथा ॥३॥
चारि बरन में मैली बुधि का, ऊंच नीच किन होई।
जो कोइ झूठी आसा राखै, अगत जायगा सोई ॥४॥
ताते सत बिस्वास टेक गहि, भक्ति करो हरि केरी।
चरन दास सुकदेव कहत हैं, होय मुक्ति गति तेरी ॥५॥

शब्द १०

॥ राग सोरठ ॥

साधो भरमा यह संसारा ॥टेक॥
गति मति लोक बड़ाई उरझे कैसे हो छुटकारा ॥१॥
भर्म पड़े नाना बिधि सेती, तीरथ बर्त अचारा ॥२॥
देह कर्म अभिमानी भूले, छूंछ पकरि तत डारा[4] ॥३॥
जोगी जोग जुक्ति करि हारे, पंडित वेद पुराना ॥४॥

(१) भाट। (२) पत्थर। (३) देवी पूजा में जो गीत गाते हैं। (४) सार छोड़ कर असार को पकड़ा।

षट दरसन पग आप पुजावैं, पहिरि पहिरि रंग बाना ॥५॥
जानत नाहिं आप हम को हैं, को है वह भगवाना ॥६॥
को यह जगत कौन गति लागै, समझै ना अज्ञाना ॥७॥
जा कारन तुम इत उत डोलो, ताको पावत नाहीं ॥८॥
चरन दास सुकदेव बतायो, हरि हैं अंतर माहीं ॥९॥

शब्द ११

॥ राग सारग ॥

घट घट में रमता रमि रहेव ॥टेक॥
चेतन तजै भजै जल पाहन। मूरख भ्रम में भ्रमि रहेव ॥१॥
एक अखंड रहेव सब व्यापक। लख चौरासी समि रहेव ॥२॥
प्रगट भानु[1] ऐसे हरि दरसैं। संपुट[2] में नहिं खमि[3] रहेव ॥३॥
आपा जानि भूल फिर आपना। नख सिख सूं नहिं हम रहेव ॥४॥
चरन दास सुकदेवहिं रलि गयो। बचन बिलास न गम रहेव ॥५॥

शब्द १२

॥ चौपाई ॥

ब्राह्मन सो जो ब्रह्म पिछानै। बाहर जाता भीतर आनै ॥१॥
पांचौ बस करि झूंठ न भाखै। दया जनेऊ हिरदे राखै ॥२॥
आतम विद्या पढ़ै पढ़ावै। परमातम का ध्यान लगावै ॥३॥
काम क्रोध मद लोभ न होई। चरन दास कहैं ब्राह्मन सोई ॥४॥

शब्द १३

॥ अरिल छद ॥

आतम ज्ञान बिना नहिं मुक्ता। बेद भेद करि देखा जोय ॥१॥
ब्रह्मा सेस महेस पूज करि। बस वह लोक रहत नहिं सोय ।२।
जल पाहन अरु भूत भवानी। पूजि पूजि भरमा सब कोय ॥३॥
.न दास तत बिरला जानै। आवा गवन दुख बहुरि न होय ।४।

(१) सूरज। (२) डिबिया जिन में शालिगराम रखते हैं। (३) छिपा।

शब्द १४

॥ राग सवैया ॥

न ऊरध बाहु न अंग भभूति । न धूनी लगाय जटा सिर धारूं ।
न मूंड़ मुड़ाय फिरूं बन हीं बन । तीरथ बर्त नहीं तन गारूं ॥१॥
उलटि लखो घट में प्रतिबिंब सो। दीपक ज्ञान चहूँ दिस जारूं ।
चरनदास कहैं मन हीं मन में । अब तुही तुही करि तोहिं पुकारूं ।२।

शब्द १५

॥ राग होरी ॥

वह देस अटपटा बिकट पंथ । कोइ गुरुमुख पहुँचै होय संत ॥टेक॥
बहुत चले मग चाव चाव । औरन सूं कहि आव आव ॥१॥
हमहु पहुंच तुम्हैं दें बसाय । ऐसो जान्यो सुलभ दाय[1] ॥२॥
बहुतक तपसी कष्ट साध । बहुतक पंडित पोथी लाद ॥३॥
बहुतक चुंडित जटा धारि । चहुं ओर पावक जारि जारि ॥४॥
बहुतक मुंडित पूजा राखि । बहुतक भक्तन पिछली साखि[2]॥५॥
बहुतक जोगी पवन जीति । हरि मिलबे की करैं रीति ॥६॥
कायर थाके बाट माहिं । कछु इक आगे चले जाहिं ॥७॥
द्यै[3] कनक कामिनी लिये घेरि । सो भी उनके पड़े फेरि ॥८॥
कोइ उन से छुट आगे जाय । जहं ऋद्धि सिद्धि लेवैं लगाय ॥९॥
सुकदेव कहैं सब डारि आस । व्हां प्रेमी पहुंचै चरनदास ॥१०॥

शब्द १६

त्रिकुटी में तीरथ अगम तिरबेनी जेहिं नाम ।
न्हाय जोग की जुक्ति सूं पूरन हों सब काम ॥१॥
रनजीत[4] कहैं जहं न्हाइये त्रिकुटी तीरथ धाम ।
नित परबी जहं होत है भजन करौ निःकाम ॥२॥

---

(१) दांव । (२) बुजुर्गों का पक्ष । (३) दी । (४) चरनदास जी का घरऊ नाम ।

साखि सुनो रैदास चमारा। सो जग में उंजियारी है ॥१२॥
कनक जनेऊ काढ़ि दिखायो। बिप्र गये सब हारी है ॥१३॥
अजामील सदना तिरलोचन। नामा नाम अधारी है ॥१४॥
धना जाट कालू अरु कूवा। बहुत किये भौ पारी है ॥१५॥
प्रीत बराबर और न देखै। बेद पुरान बिचारी है ॥१६॥
चरन दास सुकदेव कहत हैं। ता बस आप मुरारी है ॥१७॥

शब्द १८

॥ राग रामकली ॥

चारि बरन सूं हरि जन ऊंचे।
भये पवित्तर हरि के सुमिरे तन के उज्जल मन के सूचे ॥१॥
जो न पतीजै साखि बताऊं सवरी के जूंठे फल खाये।
बहुत ऋषीसर ह्वांई रहते तिनके घर रघुपति नहिं आये ॥२॥
भिल्लनि पांव दियो सरिता[1] में सुद्ध भयो जल सब कोइ जानै।
मंद हुतो सो निरमल हूवो अभिमानी नर भये खिसाने ॥३॥
ब्राह्मन छत्री भूप हुते बहु बाजो संख सुपच जब आयो।
बालमीक जग पूरन कीन्हो जैजैकार भयो जस गायो ॥४॥
जाति बरन कुल सोई नीको जाके होय भक्ति परकास।
गुरु सुकदेव कहत हैं तोको हरिजन सेव चरनहींदास ॥५॥

शब्द १९

॥ राग रामकली ॥

सब जातिन में हरि जन प्यारे ॥टेक॥
रहनी तिनकी कोइ न पावै। तन सूं जग में मन सूं न्यारे ॥१॥
साखि सुनो अंबरीष भूप की। दुरबासा जहं आयो ॥२॥
लगो स्राप देन राजा को। चक्र सुदरसन जारन धायो ॥३॥
प्रभु जी आये दुरजोधन के। वह मन में गरवायो[2] ॥४॥
नाना बिधि के व्यंजन त्यागे। साग बिदुर घर रुचि सूं पायो ॥५॥

(१) नदी। (२) अहंकार किया।

शब्द २२

॥ राग बिलावल ॥

हमारे चरन कंवल को ध्यान ॥ टेक ॥

मूरख जगत भरमता डोले चाहत जल अस्नान ॥१॥
सब तीरथ वाही सूं प्रगटे गंगा आदिक जान।
साकित[१] गिरही बानेधारी[२] हैं सब हीं अज्ञान ॥२॥
हरि सों[३] हीरा छांड़ि दियो है पूजें कांच पखान।
हरि चरनन की महिमा जानें हैं वे संत सुजान ॥३॥
जिनसे ये सब पातक नासें नित होवै कल्यान।
भोंदू नर माया के चेरे इनको कह[४] पहिचान ॥४॥
चरनदास सुकदेव गुरू ने दीन्हो अंजन ज्ञान।
सांचो प्रीतम जानि परो है बिसरि गयो सब आन ॥५॥

शब्द २३

॥ छप्पै छंद ॥

माला तिलक बनाय पूर्व अरु पच्छिम दौरा।
नाभि कंवल कस्तूरि हिरन जंगल भो[५] बौरा ॥१॥
चांद सूर्य्य थिर नहीं नहीं थिर पवन न पानी।
तिरदेवा थिर नहीं नहीं थिर माया रानी ॥२॥
चरन दास लख दृष्टि भर एक शब्द भरपूर है।
निरखि परखि ले निकट हीं कहन सुनन कूं दूर है ॥३॥

—०—

सूरमा का अंग

शब्द १

॥ राग सोरठ ॥

ना कोइ संत समान है सूरा।
मोह सहित सब सेना मारी ऐसो सावंत[६] पूरा ॥१॥

(१) मुर्दा दिल। (२) भेखी। (३) ऐसा। (४) क्या। (५) भया। (६) बहादुर।

शब्द ३

॥ राग सोरठ व आसावारी ॥

साधो टेक हमारी ऐसी ।
कोटि जतन करि छूटै नाहीं कोऊ करो अब कैसी ॥१॥
यह पग धरो संभाल अचल होइ बोल चुके सोइ बोले ।
गुरु मारग में लेन न देनो अब इत उत नहिं डोले ॥२॥
जैसे सूर सती अरु दाता पकरी टेक न टारैं ।
तन करि धन करि मुख नहिं मोड़ैं धर्म न अपनो हारैं ॥३॥
पावक जारो जल में बोरो टूक टूक करि डारो ।
साध संगति हरि भक्ति न छोड़ू जीवन प्रान हमारो ॥४॥
पैज न हारूं दाग न लागै नेक न उतरै लाजा ।
चरनदास सुकदेव दया से सब बिधि सुधरैं काजा ॥५॥

शब्द ४

॥ राग सारंग ॥

हमारे राम नाम की टेक टारी ना टरै ।
ख करो कोइ कोट करो जिय को तौ कुछ न सरै ॥१॥
ज्यों कामी कूं तिरिया प्यारी ज्यों लोभी कूं दाम ।
अमलदार कूं अमल पियारो ऐसे हम कूं नाम ॥२॥
कर सूं दृढ़ गहि गहि कै पकरों हारिल[1] की लकड़ी भई ।
अब कैसे करि छूटै मो सों रोम रोम तन मन मई ॥३॥
ज्यों प्रहलाद पैज दृढ़ कीन्ही हरनाकुस से बहु अरे[2] ।
उबरो भक्त असुर गहि मारो परगट हो हरि आ खरे[3] ॥४॥
गुरु सुकदेव सहाय करी है अब पग पाछे क्यों परै ।
चरनहिंदास वचन नहिं मोड़ै सूर सती मूए टरै ॥५॥

---

(१) एक चिड़िया जो लकड़ी को ऐसा पकड़ती है कि मरे पर भी नहीं छोड़ती ।
(२) दुशमन । (३) खड़े ।

शब्द ७

॥ राग सोरठ ॥

साधो जो पकरी सो पकरी ।
अब तौ टेक गही सुमिरन की, ज्यों हारिल की लकरी[1] ॥१॥
ज्यों सूरा ने सस्तर लीन्हो, ज्यों बनिये ने तखरी[2] ।
ज्यों सतवंती लियो सिंधौरा, तार गह्यो ज्यों मकरी ॥२॥
ज्यों कामी कूं तिरिया प्यारी, ज्यों किरपिन[3] कूं दमरी[4] ।
ऐसे हम कूं राम पियारे, ज्यों बालक कूं ममरी[5] ॥३॥
ज्यों दीपक कूं तेल पियारो, ज्यों पावक कूं समरी[6] ।
ज्यों मछली कूं नीर पियारो, बिछुरे देखै जम री ॥ ४ ॥
साधों के संग हरि गुन गाऊं, ता ते जीवन हमरी ।
चरनदास सुकदेव दृढ़ायो, और छुटी सब गम[7] री ॥५॥

शब्द ८

॥ राग कल्यान ॥

वह राजा सो यह बिधि जानै । काया नगर जीतिबो ठानै ॥१॥
काम क्रोध दोउ बल के पूरे । मोह लोभ अति सावंत सूरे ॥२॥
बल अपनो अभिमान दिखावै । इन को मारि राह गढ़ धावै ॥३॥
पांचो प्यादे देहि उठाई । जब गढ़ में कूदै मन लाई ॥४॥
ज्ञान खड़्ग लै दुंद मचावै । कपट कुटिलता रहन न पावै ॥५॥
चुनि चुनि दुरजन हनि सब डारै । रहते सहते सकल बिडारै ॥६॥
मन सूं ब्रह्म होय गति सोई । लच्छन जीव रहे नहिं कोई ॥७॥
अचल सिंहासन जब तू पावै । मुक्ति खवासी चंवर ढुरावै ॥८॥
आठौ सिद्धि जहां कर जोरैं । सौंहीं[8] ताकैं मुख नाहिं मोरैं ॥९॥
निस्चल राज अमल करै पूरा । बाजै नौबत अनहद तूरा ॥१०॥
तीन देव अरु कोटि अठासी । वै सब तेरी करैं खवासी ॥११॥

---

(१) पृष्ठ ५९ का नोट देखिये । (२) तराजू । (३) कंजूस । (४) दमड़ी जो नौ कौड़ी की होती है । (५) माता । (६) सेमर की रुई । (७) रंज । (८) सामने ही ।

गुरु सुकदेव भेद दियो नीको। चरनदास मस्तक कियो टीको ।१२।
रनजीता यह रहनी पावै। थोथी करनी कथनि बहावै ॥१३॥

शब्द ६

॥ राग करखा ॥

सोई जन सूर जो खेत में मड़ि रहै
भक्ति मैदान में रहै ठाढ़ा।
सकल लज्जा तजै महा निरभय गजै
पैज[1] नीसान जिन आय गाड़ा॥ १ ॥
भये बहु बीर गंभीर जे धीर मति
सबन कूं जस कहत ग्रन्थ होई।
तिन बिषै कछू इक नाम बरनन करूं
सुनो हो सन्त दै चित सोई॥ २ ॥
पिता सूं रूठि ध्रुव पांच हीं बर्ष को
टेक गहि भक्ति के पंथ धायो।
छल भयो ना डिगो टेक पूरी भई
जीत मैदान हरि दर्स पायो॥ ३ ॥
हठेव[2] प्रहलाद हरि नाम छांड़ो नहीं
बाप ने त्रास दै बहु डिगायो।
टेक जब ना टरी राम रच्छा करी
दुष्ट कूं मारि कै जन जितायो॥ ४ ॥
कबीर दादू[3] धने पहिर बक्तर[4] बने
नामदेव[5] सारिखे बहुत कूदे।
सैन[5] सदना[5] वली[5] भक्त पीपा[5] बड़ो
राम की ओर कूं चले सूधे॥ ५ ॥

(१) पृष्ठ ६० का नोट देखिये। (२) हठ किया। (३) धना भक्त (४) लोहे की जंजीर का वस्त्र जिसे योधा लड़ाई में पहिनते हैं। (५) भक्तों के नाम।

मलूक[1] जैदेव[1] गजगाह[2] कलंगी धरे
सूर[1] रैदास[1] मुख नाहिं मोड़ा।
ध्यान बंदूक में प्रेम रंजक जमा
मीर माधव[1] चला कुदाय घोड़ा॥ ६॥
दास मीरा पिली प्रेम सन्मुख चली
छोड़ दइ लाज कुल नाहिं माना।
और सेवरी मढ़ी तोड़ ऊंची गढ़ी
दौर कर माचली[3] प्रेम जाना॥ ७॥
श्री सुकदेव रनजीत सावँत किये
लड़े कलिजुग बिषे खंभ गाड़े।
बहुत सेना लिये ललक हूहू किये
चरनही दास संग नाहिं छांड़े॥ ८॥

शब्द १०

॥ राग सोरठ ॥

जो नर इक छत[4] भूप कहावै॥
सत्त सिंहासन ऊपर बैठे जत[5] हो चंवर दुरावै॥ १॥
दया धर्म दोउ फौज महा लै भक्ति निसान चलावै।
पुन्न नगारा नौबत बाजै दुरजन सकल हलावै॥ २॥
पाप जलाय करै चौगाना हिंसा कुबुधि नसावै।
मोह मुकद्दम काढ़ि मलुक सूं ज्ञान बैराग बसावै॥ ३॥
साधन नायब जित तित भेजै दै दै संजम साथा।
राम दोहाई सिगरे फेरै कोइ न उठावै माथा॥ ४॥
निरभय राज करै निस्चल ह्वै गुरु सुकदेव सुनावै।
चरनदास निस्चै करि जानौ बिरला जन कोइ पावै॥ ५॥

---

(१) भक्तों के नाम। (२) पृष्ट ५८ का नोट देखिये। (३) मचल गई। (४) छत्रधारी। (५) जती का धर्म याने इंद्रियों को बस में रखना।

शब्द ११

॥ राग कान्हरा ॥

धनि वे नर हरि दास कहाये ।
राम भक्ति दृढ़ही करि पकरी आन धर्म सबही बिसराये ॥१॥
आठ पहर गलतान[1] भजन में प्रेम मगन हिय में हुलसाये ।
आप तरैं तारैं औरन कूं बहुतक पापी पार लगाये ॥२॥
प्रभु दरसन बिन और न आसा धर्म काम अरु मोच्छ न चाहे
आठौ सिद्धि फिरैं संग लागी नेक न देखैं नैन उठाये ॥ ३ ॥
तिन को ऋखि मुनि जाप करत हैं हरि जन हरि दोउ संगहिं गाये
ऊंची पदवी इंदर हू ते देवन देखि अधिक ललचाये ॥ ४ ॥
कहें सुकदेव चरनही दासा धनि माता ऐसे जन जाये ।
जीवत सोभा जग में पाई तन छूटे हरि माहिं समाये ॥५॥

—:०:—

चेतावनी का अंग

शब्द १

॥ राग मंगल ॥

महा मूढ़ अज्ञान भक्ति में क्या करा ।
गुरु सूं बेमुख होय बड़ापन चित धरा ॥१॥
मुक्ति पंथ की ओर मँसूबे सूँ चला ।

यही समझ गुरु संग कबहुं नहिं त्यागिये।
मन में निस्चै लाय सरन हीं लागिये ॥६॥
सब तन अंगन माहिं दीनता लाइये।
गुरु के चरन निहारि कै सीस नवाइये ॥७॥
दोनों कर को जोरि कै अस्तुति कीजिये।
दरसन करि सुख पाय कै सिच्छा लीजिये ॥८॥
श्री सुकदेव दयाल ने मो सूं यों कही।
चरनदास सिख जानि कै ऐसा हो सही ॥९॥

शब्द २

॥ राग बिलावल ॥

करि ले प्रभु सूं नेहरा मन माली यार।
कहा गर्ब मन में धरै जीवन दिन चार ॥१॥
ज्ञान बेलि गहु टेक की दया क्यारी सँवार।
जत सत दृढ़ के बीजहीं बोवो तासु मंझार ॥२॥
सील छिमा के कूप को जल प्रेम अपार।
नेम डोल भरि खैंचि कै सींचो बाग बिचार ॥३॥
छल कीकर[1] कूं काटि कै बांधो धीरज बार।
सुमति सुबुद्धि किसान कूं राखो रखवार ॥ ४ ॥
धर्म गुलेल जु प्रीत की हित धनुष सुधार।
झूठ कपट पच्छीन कूं ता सूं मार बिडार ॥५॥
भक्ति भाव पौधा लगै फूलै रंग फुलवार।
हरि रस माता होय के देखै लाल बहार ॥ ६ ॥
सत संगति फल पाइये मिटै कुबुधि बिकार।
जब सतगुरु पूरा मिलै चाखै अमृत सार ॥ ७ ॥
समझावैं सुकदेव जी चरनदास संभार।
तेरी काया में खिलै सांचो गुलजार ॥ ८ ॥

---

(१) बबूल का पेड़।

शब्द ११

॥ राग कान्हरा ॥

धनि वे नर हरि दास कहाये ।
राम भक्ति दृढ़ही करि पकरी आन धर्म सबही बिसराये ॥१॥
आठ पहर गलतान[1] भजन में प्रेम मगन हिय में हुलसाये ।
आप तरैं तारैं औरन कूं बहुतक पापी पार लगाये ॥२॥
प्रभु दरसन बिन और न आसा धर्म काम अरु मोच्छ न चाहे
आठौ सिद्धि फिरैं संग लागी नेक न देखैं नैन उठाये ॥ ३ ॥
तिन को ऋखि मुनि जाप करत हैं हरि जन हरि दोउ संगहिं गाये
ऊंची पदवी इंदर हू ते देवन देखि अधिक ललचाये ॥ ४ ॥
कहें सुकदेव चरनही दासा धनि माता ऐसे जन जाये ।
जीवत सोभा जग में पाई तन छूटे हरि माहिं समाये ॥५॥

—:०:—

चेतावनी का अंग

शब्द १

॥ राग मंगल ॥

महा मूढ़ अज्ञान भक्ति में क्या करा ।
गुरु सूं बेमुख होय बड़ापन चित धरा ॥१॥
मुक्ति पंथ की ओर मँसूबे सूँ चला ।
तैसे वर्त[2] पै जाय जो नट भूला कला ॥२॥
गिरा धरनि पर आय भया तन चूर है ।
जो कोइ ऐसा होय बड़ा ही क्रूर[3] है ॥३॥
जैसे वृच्छ तें टूटि बिगड़ फल जात है ।
ऐसे गुरु तें छूटि कछू न रहात है ॥४॥
द्रुम[4] हीं सूं लगि रहा जु फल नीका भया ।
पका भली ही भांति धनी के कर गया ॥५॥

---

(१) मतवाले । (२) रस्सा । (३) दुष्ट । (४) पेड़ ।

यही समझ गुरु संग कबहुं नहिं त्यागिये।
मन में निस्चै लाय सरन हीं लागिये ॥६॥
सब तन अंगन माहिं दीनता छाइये।
गुरु के चरन निहारि कै सीस नवाइये ॥७॥
दोनों कर को जोरि कै अस्तुति कीजिये।
दरसन करि सुख पाय कै सिच्छा लीजिये ॥८॥
श्री सुकदेव दयाल ने सो सूं यों कही।
चरनदास सिख जानि कै ऐसा हो सही ॥९॥

शब्द २

॥ राग बिलावल ॥

करि ले प्रभु सूं नेहरा मन माली यार।
कहा गर्व मन में धरै जीवन दिन चार ॥१॥
ज्ञान बेलि गहु टेक की दया क्यारी सँवार।
जत सत दृढ़ के बीजहीं बोवो तासु मंझार ॥२॥
सील छिमा के कूप को जल प्रेम अपार।
नेम डोल भरि खैंचि कै सींचो बाग बिचार ॥३॥
छल कीकर[1] कूं काटि कै बांधो धीरज बार।
सुमति सुबुद्धि किसान कूं राखो रखवार ॥ ४ ॥
धर्म गुलेल जु प्रीत की हित धनुष सुधार।
झूठ कपट पच्छीन कूं ता सूं मार बिडार ॥५॥
भक्ति भाव पौधा लगै फूलै रंग फुलवार।
हरि रस माता होय के देखै लाल बहार ॥ ६ ॥
सत संगति फल पाइये मिटै कुबुधि बिकार।
जब सतगुरु पूरा मिलै चाखै अमृत सार ॥ ७ ॥
समझावैं सुकदेव जी चरनदास संभार।
तेरी काया में खिलै सांचो गुलजार ॥ ८ ॥

(१) बबूल का पेड़।

शब्द ११

॥ राग कान्हरा ॥

धनि वे नर हरि दास कहाये ।
राम भक्ति दृढ़ही करि पकरी आन धर्म सबही बिसराये ॥१॥
आठ पहर गलतान[1] भजन में प्रेम मगन हिय में हुलसाये ।
आप तरैं तारैं औरन कूं बहुतक पापी पार लगाये ॥२॥
प्रभु दरसन बिन और न आसा धर्म काम अरु मोच्छ न चाहे ।
आठौ सिद्धि फिरैं संग लागी नेक न देखैं नैन उठाये ॥ ३ ॥
तिन को ऋखि मुनि जाप करत हैं हरि जन हरि दोउ संगहिं गाये ।
ऊंची पदवी इंदर हूं ते देवन देखि अधिक ललचाये ॥ ४ ॥
कहें सुकदेव चरनही दासा धनि माता ऐसे जन जाये ।
जीवत सोभा जग में पाई तन छूटे हरि माहिं समाये ॥५॥

—.०:—

चेतावनी का अंग

शब्द १

॥ राग मंगल ॥

महा मूढ़ अज्ञान भक्ति में क्या करा ।
गुरु सूं बेमुख होय बड़ापन चित धरा ॥१॥
मुक्ति पंथ की ओर मँसूबे सूँ चला ।
तैसे वर्त[2] पै जाय जो नट भूला कला ॥२॥
गिरा धरनि पर आय भया तन चूर है ।
जो कोइ ऐसा होय बड़ा ही क्रूर[3] है ॥३॥
जैसे वृच्छ तें टूटि बिगड़ फल जात है ।
ऐसे गुरु तें छूटि कछू न रहात है ॥४॥
द्रुम[4] हीं सूं लगि रहा जु फल नीका भया ।
पका भली ही भांति धनी के कर गया ॥५॥

---

(१) मतवाले । (२) रस्सा । (३) दुष्ट । (४) पेड़ ।

त्रैगुन के त्रै दोष पगो है काम क्रोध ज्वर जारा।
तृस्ना बायु उठी उर अंतर डोलत द्वारहिं द्वारा ॥२॥
बिषै बासना पित कफ लागी इन्द्रिन के सुख सारा।
सतसंगति रस करुवा लागे करत न अंगीकारा ॥३॥
सत पुरुसन को कहा न मानै सील छिमा नहिं धारा।
रसना स्वाद तजो नहिं मूरख आपनपौ न संभारा ॥४॥
चरनदास सुकदेव मिले जब औषधि ज्ञान बिचारा।
तन मन को सब रोग मिटायो आवा गवन निवारा ॥५॥

शब्द ६

॥ राग नट व बिलावल सारंग ॥

हमारे राम भक्ति धन भारी।
राज न डांड़ै चोर न चोरै लूटि सकै नहिं धारी ॥१॥
प्रभु पैसे अरु नाम रुपैये मुहर मोहब्बत हरि की।
हीरा ज्ञान जुक्ति के मोती कहा कमी है ज़र[1] की ॥२॥
सोना सील भंडार भरे हैं रूपा रूप अपारा।
ऐसी दौलत सतगुरु दीन्ही जा का सकल पसारा ॥३॥
बांटौं बहुत घटै नहिं कबहूँ दिन दिन डेवढ़ी डेवढ़ी।
चोखा माल द्रब्य अति नीका बट्टा लगै न कौड़ी ॥४॥
साह गुरू सुकदेव बिराजैं चरनदास बन जोटा[2]।
मिलि मिलि रंक[3] भूप होइ बैठे कबहुँ न आवै टोटा ॥५॥

शब्द ७

॥ राग काफी ॥

क्या दिखलावै सान[4] यह कुछ थिर न रहैगा।
दारा सुत अरु माल मुलुक का कहा करै अभिमान ॥१॥
रावन कुंभकरन हरनाकुस राजा कर्न समान।
अरजुन नकुल भीम से जोधा माटी हुए निदान ॥२॥

(१) रुपया, सोना। (२) व्यौपारी। (३) दरिद्र। (४) शान।

शब्द ३

॥ राग देव गंधार ॥

मनुवां राम के ब्योपारी ।
अब के खेप भक्ति की लादी बनिज कियो तैं भारी ॥ १ ॥
पांचो चोर सदा मग रोकत इन सूं कर छुटकारी ।
सतगुरु नायक के संग मिलि चल लूट सकै नहिं धारी[1] ॥ २ ॥
दो ठग मारग माहिं मिलैंगे एक कनक इक नारी ।
सावधान हो पेंच न खैयो रहियो आप संभारी ॥ ३ ॥
हरि के नगर में जा पहुँचोगे पैहो लाभ अपारी ।
चरनदास तो कूं समुझावैं हे मन बारम्बारी ॥ ४ ॥

शब्द ४

॥ राग धनाश्री ॥

अपना हरि बिन और न कोई ।
मातु पिता सुत बंधु कुटुंब सब स्वारथ हीं के होई ॥१॥
या काया कूं भोग बहुत दै मरदन करि करि धोई ।
सो भी छूटत नेक तनिक सी संग न चाली वोई ॥२॥
घर की नारि बहुत हीं प्यारी तिन में नाहीं दोई[2] ।
जीवत कहती साथ चलूगी डरपन लागी सोई ॥३॥
जो कहिये यह द्रब्य आपनी जिन उज्जल मति खोई ।
आवत कष्ट रखत रखवारी चलत प्रान ले जोई ॥४॥
या जग में कोइ हितू न दीखै मैं समझाऊं तोई ।
चरनदास सुकदेव कहैं यों सुनि लीजे नर लोई ॥५॥

शब्द ५

॥ राग धनाश्री ॥

मन में दीरघ भरे बिकारा ।
सतगुरु साहब वैद मिले बिनु कटैं न रोग अपारा ॥१॥

---

(१) लुटेरों की एक जाति । (२) एक जान दो कालिब ।

त्रैगुन के त्रै दोष पगो है काम क्रोध ज्वर जारा।
तृस्ना बायु उठी उर अंतर डोलत द्वारहिं द्वारा ॥२॥
बिषै बासना पित कफ लागी इन्द्रिन के सुख सारा।
सतसंगति रस करुवा लागे करत न अंगीकारा ॥३॥
सत पुरुसन को कहा न मानै सील छिमा नहिं धारा।
रसना स्वाद तजो नहिं मूरख आपनपौ न संभारा ॥४॥
चरनदास सुकदेव मिले जब औषधि ज्ञान बिचारा।
तन मन को सब रोग मिटायो आवा गवन निवारा ॥५॥

शब्द ६

॥ राग नट व बिलावल सारंग ॥

हमारे राम भक्ति धन भारी।
राज न डांड़ै चोर न चोरै लूटि सकै नहिं धारी ॥१॥
प्रभु पैसे अरु नाम रुपैये मुहर मोहब्बत हरि की।
हीरा ज्ञान जुक्ति के मोती कहा कमी है ज़र[1] की ॥२॥
सोना सील भंडार भरे हैं रूपा रूप अपारा।
ऐसी दौलत सतगुरु दीन्ही जा का सकल पसारा ॥३॥
बांटौं बहुत घटै नहिं कबहूँ दिन दिन डेवढ़ी डेवढ़ी।
चोखा माल द्रव्य अति नीका बट्टा लगै न कौड़ी ॥४॥
साह गुरू सुकदेव बिराजैं चरनदास बन जोटा[2]।
मिलि मिलि रंक[3] भूप होइ बैठे कबहुँ न आवै टोटा ॥५॥

शब्द ७

॥ राग काफी ॥

क्या दिखलावै सान[4] यह कुछ थिर न रहैगा।
दारा सुत अरु माल मुलुक का कहा करै अभिमान ॥१॥
रावन कुंभकरन हरनाकुस राजा कर्न समान।
अरजुन नकुल भीम से जोधा माटी हुए निदान ॥२॥

(१) रुपया, सोना। (२) ब्योपारी। (३) दरिद्र। (४) शान।

छिन छिन तेरो तन छीजत है सुन मूरख अज्ञान।
फिर पछताये कहा होयगा जब जम घेरै आन ॥३॥
बिनसैं[१] जल थल रबि ससि तारे सकल सृस्टि की हानि।
अजहूँ चेत हेत करु हरि सूं ताही को पहिचान ॥४॥
नवधा भक्ति साधु की संगति प्रेम सहित कर ध्यान।
चरनदास सुकदेव हिं सुमिरौ जो चाहौ कल्यान ॥५॥

शब्द ८

॥ राग मालश्री ॥

थिर नहिं रहना है आखिर मौत निदान ॥टेक॥
देखत देखत बहुतक बिनसे आवत तुम्हरी बारि।
जतन करो कोइ नाना बिधि के बचै नहीं नर नारि ॥१॥
वे जोगेस्वर बस करि मौतै जड़ दियौ बज्र किवाड़।
ह्वै बैठे ज्यों मरना नाहीं माटी ह्वै गये हाड़ ॥२॥
कित गये रावन कुंभकरन से हरनाकुस सिसुपाल।
संकर दियो अमर बर जिनको सो भी खाये काल ॥३॥
यह तन बरतन कांच को रे ठेस लगे खुलि जाय।
आज मरै कै कोटि बर्स लौं अंत नहीं ठहराय ॥४॥
बीतत अवधि चलावा आवै छांड़ि जगत की आस।
गुरु सुकदेव चितावैं तो कूं समुझ चरन हीं दास ॥५॥

शब्द ९

॥ राग गौरी ॥

आवो साधो हिलि मिलि हरि जस गावैं।
प्रेम भक्ति की रीति समुझ करि हित सूं राम रिझावैं ॥१॥
गोविंद के कौतुक गुन लीला ता को ध्यान लगावैं।
सेवा सुमिरन वंदन अरचन[२] नौधा सूं चित लावैं ॥२॥

---

(१) नाश होग। (२) पूजन।

अब की औसर भलो बनो है बहुरि दांव कब पावैं ।
भजन प्रताप तरैं भव सागर उर आनंद बढ़ावैं ॥३॥
सतसंगति को साबुन लेकर ममता मैल बहावैं ।
मन कूं धो निरमल करि उज्जल मगन रूप हो जावैं ॥४॥
ताल पखावज झांझ मजीरा मुरली संख बजावैं ।
चरनदास सुकदेव दया सूं आवागवन मिटावैं ॥५॥

शब्द १०

॥ राग आसावरी ॥

गुरुमुख यह जग झूंठ लखाया ।
साध संत अरु बेद कहत हैं और पुरानन गाया ॥१॥
मृग तृस्ना के नीर लोभाना सीपी रूपा जाना ।
फटिक सिला पर पीक परी है मूरख लाल लोभाना ॥२॥
सुपने में सब ठाठ ठटो है कुल नाते परिवारा ।
दृष्टि खुली जब सब हीं नासे रहो नहीं आकारा ॥३॥
ताते चेत भजन करि हरि को यहां मत मन को पागो ।
वा घर गये बहुरि नहिं आवो आवा गवन न लागो ॥४॥
या सुपने में लाभ यही है चरनदास मुख भाखो ।
जोगेस्वर जा पद मिलि रहिया तुरिया हित चित राखो ॥५॥

शब्द ११

॥ राग मालश्री ॥

छिन भंगी छल रूप यह तन ऐसा रे ॥ टेक ॥
जा को मौत लगौ बहु बिधि सूं नाना अँग ले बान ।
बिख अरु रोग सस्त्र बहुतक हैं और विघन बहु हान ॥१॥
निस्चै बिनसै बचै न क्यों हीं जतन किये बहुदान ।
गृह नच्छत्र अरु देव मनावैं साधैं प्रान अपान ॥२॥
अचरज जीवन मरिबो सांचो यह औसर फिर नाहिं ।
पिछले दिन ठगियन संग खोये रहे सो योंहीं जाहिं ॥३॥

जो पल है सो हरि कूं सुमिरो साध संगति गुरुसेव ।
चरनदास सुकदेव बतावैं परम पुरातन भेव ॥४॥

शब्द १२

॥ राग मालश्री ॥

जानै कोइ संत सुजान यह जग सुपना है ॥टेक॥
सुपनै कुटुंबी आपा मानै सुपनै बैरागी लय ।
सुपनै लेना सुपनै देना सुपनै निर्भय भय ॥ १ ॥
सुपनै राजा राज करत है सुपनै जोगी जोग ।
सुपनै दुखिया दुख बहु पावै सुपनै भोगी भोग ॥ २ ॥
सुपनै सूरा रन में जूझै सुपनै दाता दान ।
पसुनै पिय संग पावक जरिया सुपनै मान अपमान ॥ ३ ॥
सुपनै ज्ञानी गुरु गम जागै अपना रूप निहारि ।
अज्ञानी सोवत सुपने में डसे अविद्या नारि ॥ ४ ॥
चरनदास सुकदेव चितावैं सुपना सो सब झूठ ।
अचरज समझ अगाध पुरानी मौन गहो यहि मूठ ॥ ५ ॥

शब्द १३

॥ राग बरवा ॥

या तन को कह गर्व करत है, ओला ज्यों गलि जावै रे ॥टेक॥
जैसे बरतन बनो कांच को, ठपक[1] लगे बिनसावै[2] रे ।
झूंठ कपट अरु छलबल करि कै, खोटे करम कमावै रे ॥१॥
बाजीगर के बांदर सा ज्यों, नाचत नाहिं लजावै रे ।
जब लौं तेरी देह पराक्रम, तब लौं सबन सोहावै रे ॥२॥
माय कहै मेरा पूत सपूता, नारी हुकम चलावै रे ।
पल पल पल पल पलटै काया, छिन छिन माहिं घटावै रे ॥३॥
बालक तरुन होय फिर बूढ़ा, जरा मरन पुनि आवै रे ।
तेल फूलेल सुगंध उबटनो, अंबर अतर लगावै रे ॥४॥

---

(१) ठेस । (२) टूट जाता है ।

नाना बिधि सूं पिन्ड संवारै, जरि बरि धूरि समावै रे।
कोटि जतन सूं बचै न क्योंहीं, देवी देव मनावै रे ॥ ५ ॥
जिनकूं तू अपनो करि जानै, दुख में पास न आवै रे।
कोई झिड़कै कोइ अनखावै[1], कोई नाक चढ़ावै रे ॥ ६ ॥
यह गति देखि कुटुँब अपने की, इन में मत उरझावै रे।
अब हीं जम सूं पाला परि है, कोई नाहिं छुड़ावै रे ॥७॥
औसर खोवै पर के काजे, अपनो मूल गंवावै रे।
बिन हरि नाम नहीं छुटकारो, बेद पुरान बतावै रे ॥ ८ ॥
चेतन रूप बसै घट अंतर, स्रम सूल[2] बिसरावै रे।
जो टुक ढूंढ़ खोज करि देखै, सो आपहिं में पावै रे ॥९॥
जो चाहे चौरासी छूटै, आवा गवन नसावै रे।
चरन दास सुकदेव कहत हैं, सतसंगति मन लावै रे ॥१०॥

शब्द १४

॥ राग बरवा ॥

तन का तनिक भरोसा नाहीं, काहे करत गुमाना रे।
ठोकर लगे नेकहूँ चलतै, करि हैं प्रान पयाना रे ॥१॥
ऐंठ अकड़ सब छोड़ बावरे, तेज तमक इतराना रे।
रंचक जीवन जगत अचंभो, छिन माहीं मर जाना रे ॥२॥
मैं मैं मैं मैं क्यों करता है, माया माहिं लोभाना रे।
बहु परिवार देखि कै फूलो, मूरख मूढ़ अयाना रे ॥३॥
टेढ़ो चलै मिरोरत मूछैं, बिषय वास पिपटाना रे।
आपन कूं ऊंचो करि जानै, मातो मद अभिमाना रे ॥४॥
पीर फकीर औलिया जोगी, रहैं न राजा राना रे।
धरनि अकास सूर ससि नासैं, तेरो क्या उनमाना[3] रे ॥५॥
ठाढ़ा घात करै सिर पै जम, ताने तीर कमाना रे।
पलक पैंड़[4] पे तकि तकि मारै, काल अचानक बाना[5] रे ॥६॥

(१) क्रोध करै। (२) कष्ट। (३) हैसियत। (४) रास्ता। (५) तीर।

स्वांस निकसि चढ़ि आंखि जाहिं जब, काया जरै निदाना रे।
तोकूं बांधि नरक लै जै हैं, करि हैं अगिन तपाना रे ॥७॥
अजहूँ चेत सीख ले गुरु की, करि ले ठौर ठिकाना रे।
अमर नगर पहिचान सिदौसी[1], तब नहिं आवन जाना रे ॥८॥
हरि की भक्ति साधु की संगति, यह मति बेद पुराना रे।
चरनदास सुकदेव कहत हैं, परम पुरातन[2] ज्ञाना रे ॥९॥

शब्द १५

॥ राग सोरठ ॥

दम का नहीं भरोसा रे, करिले चलने का सामान।
तन पिंजरे सूं निकस जायगो, पल में पंछी प्रान ॥१॥
चलते फिरते सोवत जागत, करत खान अरु पान।
छिन छिन छिन छिन आयु घटत है, होत देह की हान ॥२॥
माल मुलक औ सुख सम्पति में, क्यों हूवा गलतान।
देखत देखत बिनसि जायगो, मत करु मान गुमान ॥३॥
कोई रहन न पावै जग में, यह तू निस्चै जान।
अजहूँ समुझि छांडु कुटिलाई, मूरख नर अज्ञान ॥४॥
टेरि चितावैं ज्ञान बतावैं, गीता बेद पुरान।
चरनदास सुकदेव कहत हैं, राम नाम उर आन ॥५॥

शब्द १६

॥ राग काफी ॥

वह बोलता कित गया नगरिया तजि कै।
दस दरवाजे ज्यों के त्यों ही कौन राह गया भजि कै ॥१॥
सूना देस गांव भया सूना सूने घर के बासी।
रूप रंग कछु औरै हूआ देही भई उदासी ॥ २ ॥
साजन थे सो दुरजन हूए तन को बांधि निकारा।
चिता संवारि लिटा करि ता में ऊपर धरा अँगारा ॥ ३ ॥

(१) जल्दी। (२) प्राचीन, पुराना।

ढह गया महल चुहल थी जा में मिल गया माटी माहीं ।
पुत्र कलित्तर भाई बंधू सब हीं ठोंक जलाहीं ॥ ४ ॥
देखत हीं का नाता जग में मुए संग नहिं कोई ।
चरनदास सुकदेव कहत हैं हरि बिन मुक्ति न होई ॥ ५ ॥

शब्द १७

॥ राग काफी ॥

समझौ रे भाई लोगो समझौ रे ।
अरे ह्यां नहिं रहना, करना अंत पयाना ॥टेक॥
मोह कुटुंब के औसर खोयो, हरि की सुधि बिसराई ।
दिन धंधे में रैन नींद में ऐसे आयु गंवाई ॥१॥
आठ पहर की साठौ घरियां सो तौ बिरथा खोई ।
छिन इक हरि को नाम न लीन्हो कुसल कहां ते होई ॥२॥
बालक था जब खेलत डोला तरुन भया मद माता ।
बृद्ध भये चिंता अति उपजी दुख में कछु न सुहाता ॥३॥
भूला कहा चेत नर मूरख काल खड़ो सर[1] साधे[2] ।
बिष को तीर खैंचि के मारै आय अचानक बांधै ॥४॥
झूंठे जग से नेह छोड़ करि सांचो नाम उचारो ।
चरनदास सुकदेव कहत हैं अपनो भलो बिचारो ॥५॥

शब्द १८

॥ राग काफी ॥

छले सब कनक कामिनि रूप ।
सुर असुर अरु जच्छ गंधर्व, इन्द्र आदिक भूप ॥१॥
सावित्री बस कियो ब्रह्मा, पारबती त्रिपुरारि[3] ।
करन लीला संग लछमी, हरि लियो औतार ॥२॥
रावन से अति बली मारे, मौत जिन बस कीन ।
पसु नरन की को चलावै, ये तौ अति आधीन ॥३॥
रूप रस में दे धतूरा, मोह फांसी डार ।
तप की पूंजी छीनि कै कियो, स्रंगि रिषि कूं ख्वार[4] ॥४॥

---

(१) बान । (२) निशाना तके । (३) महादेव । (४) खराब ।

माया ठगनी ठगे सबहीं, बचे गुरु सुकदेव।
रनजीता कोइ ऊबरो, निजदास चरनन सेव ॥५॥

शब्द १९

॥ राग बिहाग ॥

रे नर हरि प्रताप न जाना
तुव कारन सब कुछ नित कीन्हा सो करता न पिछाना ॥१॥
जेहिं प्रताप तेरि सुन्दर काया हाथ पांव मुख नासा[1]।
नैन दिये जा सों सब सूझै होय रहा परकासा ॥२॥
जेहिं प्रताप नाना बिधि भोजन बस्तर भूषन धारै।
वा का नाहिं निहोरा[2] मानै ताको नाहिं संभारै ॥३॥
जेहिं प्रताप तू भूप भयो है भोग करै मन मानै।
सुख लै वा को भूलि गयो है करि करि बहु अभिमानै ॥४॥
अधिकी प्यार करै माता सूं पल पल में सुधि लेवै।
तू तौ पीठि दिये ही नितहीं सुमिरन सुरति न देवै ॥५॥
कृतघनी[3] औ नूनहरामी[4] न्याय इंसाफ न तेरे।
चरनदास सुकदेव कहत हैं अजहूं चेतु सबेरे ॥६॥

शब्द २०

॥ राग आसावारी ॥

साधो भक्ति नफा करि लीजै, दिन दिन काया छीजै ॥टेक॥
मकर[5] तजै तौ मक्का[6] मन[7] में, कपट तजै तौ कासी।
और तीर्थ सबहीं जग न्हाया, नाहिं छुटी जम फांसी ॥१॥
भाल तले[8] तिरबेनी राजै, बिरले जन कोइ न्हावै।
सगुरा[9] होय सो नित उठि परसै, निगुरा जान न पावै ॥२॥
काया मंदिर में हरि कहिये, वेद पुरान बतावै।
इत उत भूले लोग फिरत हैं, धोखे कूं सिर नावै ॥ ३ ॥
जंतर टोना मूड़ हिलावन, ता कूं सांच न मानो।
तजि कै सार असार गह्यो है, ता पर भयो सयानो ॥ ४ ॥

---

(१) नाक। (२) इहसान। (३) नाशुकरा। (४) नमक हराम। (५) कपट। (६) मुसलमानों का तीर्थ। (७) अन्तर। (८) पेशानी के नीचे। (९) गरमस।

चरनदास सुकदेव कहत हैं, निज करि मूल गहीजे ।
पार ब्रह्म जिन सृष्टि उपाई[1], ताहि ओरि चित दीजे ॥५॥

शब्द २१

॥ राग बिलावल ॥

अजब फकीरी साहबी आगन सूं पैये ।
प्रेम लगा जगदीस का कछु और न चहिये ॥ १ ॥
राव रंक कूं सम गिनैं कुछ आसा नाहीं ।
आठ पहर सिमिटे रहैं अपने ही माहीं ॥ २ ॥
बैर प्रीत उनके नहीं नहिं बाद बिबादा ।
रूठे से जग में रहैं सुनैं अनहद नादा ॥ ३ ॥
जो बोलैं तौ हरि कथा नहिं मौनै[2] राखैं ।
मिथ्या करुवा दुरबचन कबहूँ नहिं भाखैं ॥ ४ ॥
जीव दया अरु सीलता नख सिख सूं धारैं ।
पांचौ दूतन बसि करैं मन सूं नहिं हारैं ॥ ५ ॥
दुख सुख दोनों के परे आनंद दरसावैं ।
जहां जाय अस्थल करैं माया पवन न जावैं ॥ ६ ॥
हरि जन हरि के लाड़िले कोइ लहै न भेवा ।
सुकदेव कही चरनदास सूं कर तिन की सेवा ॥ ७ ॥

शब्द २२

॥ राग बिलावल ॥

ऐसा ही दुरवेस हो जग को बिसरावै ।
ईमान सबूरी सांच सूं सोइ बख्शा जावै ॥ १ ॥
ज़र[3] ज़न[4] और ज़मीन कूं दिल में नहिं लावै ।
फ़िक्र फ़क़ीरी को बुरा वह ज़िक्र छुटावै[5] ॥ २ ॥
फ़े फ़ाक़े[6] का गुन यही राज़िक़[7] करे यादा ।
क़ाफ़ क़िनाअत[8] सुख घना आनंद अगाधा ॥ ३ ॥
रे रियाज़त[9] बलवान है हरि कूं अपनावै ।
आख़िर को दीदार हीं निस्चै करि पावै ॥ ४ ॥

---

(१) पैदा की । (२) चुप । (३) रुपया । (४) औरत । (५) अभ्यास के लिये चिंता [illegible] बिघ्न है जिस से सुमिरन नहीं बन पड़ता । (६) उपास । (७) अन्नदाता । (८) संतो[illegible]
(९) भजन, बंदगी ।

इज्ज़[1] को धारे रहै रहै सब सूं नीचा ।
सुकदेव कही चरनदास सूं पावै पद ऊंचा ॥ ५ ॥

शब्द २३

॥ राग केदारा ॥

सो मेरो कहो मान रे भाई ।
ज्ञान गुरु को राखि हिय में बंध कटि जाई ॥ १ ॥
बालपन तैं खेलि खोये गई तरुनाई ।
चेत अजहूं भली बर[2] है जरा[3] हूँ आई ॥ २ ॥
जिनके कारन बिमुख हरि तें फिरत भटकाई ।
कुटुंब सब हीं सुख के लोभी तेरे दुखदाई ॥ ३ ॥
साधु पदवी धारना धर छाडु कुटिलाई ।
बासना तजि भोग जग की होय मुक्ताई ॥ ४ ॥
बहुरि जोनी नाहिं आवै परम पद पाई ।
चरनदास सुकदेव के घर अनंद अधिकाई ॥ ५ ॥

शब्द २४

॥ रेखता ॥

दो दिन का जग में जीवना करता है क्यों गुमान ।
ऐ बेसहूर गीदी टुक राम को पिछान ॥ १ ॥
दावा खुदी का दूर कर अपने तु दिल सेती ।
चलता है अकड़ अकड़ के ज्वानी का जोस[4] आन ॥ २ ॥
मुरसिद[5] का ज्ञान समझ के हुसियार हो सिताब[6] ।
गफलत को छोड़ सुहबत सधों की खूब जान ॥ ३ ॥
दौलत का ज़ौक़[7] ऐसे ज्यों आब[8] का हुबाब[9] ।
जाता रहैगा छिन में पछतायगा निदान ॥ ४ ॥
दिन रात खोवता है दुनिया के कारबार ।
इक पल भि याद सांइ की करता नहीं अजान ॥ ५ ॥
सुकदेव गुरू ज्ञान चरनदास को कहैं ।
भज राम नाम सांचा पद मुक्ति का निधान ॥ ६ ॥

---

(१) आजिज़ी, दीनता । (२) वेला, अवसर । (३) बुढ़ापा । (४) जोश । (५) गुरू । (६) जल्द । (७) चाह, लालसा । (८) पानी । (९) बुल्ला ।